www.sukhiparivar.com

₹25

समृद्ध सुखी परिवार

जुलाई 2011

dgk [kk x;h
nknk&nknh dh dgkuh

thou dk lkn;
n'ku g lnjdkM

jkxuk'kd g
;K dk/kvk

lLdkj g
,d nhif'k[kk

vr%dj.k dh
ifo=rk g eu dk ri

i#"kkFk dh
T;kfr tyk,

lk/kuk d fy, pkfg, mfpr ifjo'k

VASU CREATION

B-4/1626,RAI BAHADUR ROAD,LUDHIANA - 141 008

Phone No. 0161-2740154, 98142-62392

Mfrs. of PREMIUM RANGE OF GIRLS, LADIES & GENTS NIGHT WEARS,

-: SPECIALISTS IN :-

❖LONG KURTA ❖3PC SET ❖MATERNITY WEAR ❖JIM WEAR ❖CAPRI SET & SLEX SUIT.

समृद्ध सुखी परिवार

सुखी और समृद्ध परिवार का मुखपत्र

वर्ष : 2 अंक : 6

जुलाई 2011, मूल्य : 25 रु.

मार्गदर्शक
गणि राजेन्द्र विजय

परामर्शक
मनीष जैन
अध्यक्ष: सुखी परिवार फाउंडेशन

संपादक
ललित गर्ग
(9811051133)

लेआउट आर्टिस्ट
एम एस बोरा
(9910406059)

संपादक मंडल
दीपक रथ, मितेश जैन, चेतन आर. जैन,
दीपक जैन-भायंदर, निकेश जैन,
श्रेणिक एम. जैन-मुंबई,
चंदू वी. सोलंकी-बैंगलोर,
राजू वी. देसाई-अहमदाबाद,
मुकेश अग्रवाल-दिल्ली,
विपिन जैन-लुधियाना

विज्ञापन प्रतिनिधि
जसवंत परमार

: शुल्क :
वार्षिक: 300 रु.
दस वर्षीय: 2100 रु.
पंद्रह वर्षीय: 3100 रु.

कार्यालय
ई-253, सरस्वती कुंज अपार्टमेंट
25 आई.पी. एक्सटेंशन, पटपड़गंज
दिल्ली-110092
फोन: 011-22727486, 43057823
E-mail: lalitgarg11@gmail.com

7

विनम्रता है मोक्ष का द्वार

मोक्ष का घर कहां हैं? विनम्रता में है, विनय में है, मृदुता में है। यह विनम्रता, मृदुता, प्राणी को मोक्ष के द्वार पर ले जाकर खड़ा कर देती है। लोक व्यवहार में भी हम देखते हैं कि जो अधिक ज्ञान अथवा वैभव सम्पन्न व्यक्ति होता है, वह बहुत विनम्र होता है।

-गणि राजेन्द्र विजय

6	आगे बढ़ो, लक्ष्य तुम्हारे सामने है!	वल्लभ उवाच
6	कपड़े बेशक गंदे हों, आत्मा साफ होनी चाहिए	मार्क ट्वेन
8	मां के कदमों के नीचे है जन्नत	युधिष्ठर लाल कक्कड़
9	सर्वश्रेष्ठ धर्म है आचरण	राजीव मिश्र
10	मनुष्य जीवन में शंख की महत्ता	नरेश जनप्रिय
11	अच्छे स्वास्थ्य हेतु लाभदायक है श्री गायत्री मंत्र	डॉ. रामसिंह यादव
12	सूर्य पूजा का एक रूप सी दोनाई	शुभदा पांडेय
12	संपन्नता में है सुख?	डॉ. हीरालाल छाजेड़ जैन
13	सपने यों ही नहीं आते	अरस्तू
13	विपत्तियों की जड़ है अज्ञान	स्वामी दयानंद सरस्वती
14	जीवन का सौंदर्य-दर्शन है सुंदरकांड	सत्यनारायण भटनागर
15	रोगनाशक है यज्ञ का धुआं	शशिभूषण शलभ
16	जल द्वारा चिकित्सा एक अमूल्य उपहार	छोटेलाल यादव
17	भारत का प्रहरी हिमालय	प्रो. महेन्द्र रायजादा
18	शीतल पेय और स्वास्थ्य	विवेक त्रिवेदी
19	आहार का संबंध शरीर से है, जिह्वा से नहीं	नेमिशरण मित्तल
20	मृत्यु पश्चात आत्मा का अस्तित्व	सुरेन्द्र अंचल
22	बहुत काम की है बेल	डॉ. हौसिला प्रसाद पांडे
22	स्मृति विकास के घरेलू नुस्खे	स्नेहलता मिश्रा
23	लोकतंत्र की भाषा	शंभु चौधरी
23	न्यूमरोलॉजी में नंबर-6 का महत्व	नीता बोकाड़िया
26	जब कृष्ण ने सुदामा को पगड़ी पहनाई	जगजीत सिंह
27	साधना के लिए चाहिए उचित परिवेश	सीताराम गुप्ता
29	संस्कार है एक दीपशिखा	मंजुला जैन
30	अंत:करण की पवित्रता है मन का तप	आचार्य विजय वीरेन्द्र सूरि
31	स्वस्थ लोकतंत्र की बुनियाद	आचार्य महाश्रमण
32	सदा सुहागन वधू	मृदुला सिन्हा
32	शनि करते हैं न्यायाधीश का कार्य	मुरली कांठेड़
33	मोती: एक शांतिप्रदाता रत्न	मुनि धरणेन्द्र
33	धर्म की धारणा	श्री आनंदमूर्ति
34	वृद्धावस्था है एक नयी शुरुआत	ईरा सिंह
35	विनम्रता है, पैरों को नमस्कार करना	अनोखीलाल कोठारी
35	गाय: एक साक्षात् मंदिर	पुखराज सेठिया
35	वैज्ञानिक सोच के बावजूद	सुरेश पंडित
36	क्या इच्छामृत्यु मौलिक अधिकार है?	डॉ. श्रीगोपाल काबरा
38	गुणकारी औषधि है नींबू	सुप्रिया
38	ऐसे सवाल जो जिंदगी बदल दें	दिलीप भाटिया
39	जीवन जीने का चिंतन	रूपनारायण काबरा
40	Cow stands for religious values...	Gani Rajendra Vijay
41	Health and happiness	Acharya Mahaprajna
41	It's good to forget	Maulana Wahiddudin Khan
42	कहां खो गयी दादा-दादी की कहानी	संदीप कपूर
45	सकारात्मक सोच के दस सूत्र	जनार्दन शर्मा
45	सहिष्णुता	साध्वीप्रमुखा कनकप्रभा
45	अहिंसा के मायने	के. आर. शर्मा
46	पुरुषार्थ की ज्योति जलाएं	मनीष जैन

Published, Printed, Edited and owned by Lalit Garg from E-253, Saraswati Kunj Appartment, 25 I.P. Extn. Patparganj, Delhi-110092. Printed at : Bookman Printers, A-121, Vikas Marg, Shakarpur, Delhi-110092.
Editor : Lalit Garg

समृद्ध सुखी परिवार पत्रिका की प्रशंसा सुनकर, पढ़कर एवं चर्चा करके प्रसन्नता होती है। पत्रिका ने आपके सूझबूझ संपूरित संपादन से सभी को प्रभावित कर दिया है। बहुआयामी रचना चयन, अत्यंत सुंदर चित्रमय प्रस्तुति कलात्मक मुद्रण सभी कुछ किसी को भी आकर्षित करने में सक्षम है। आपका कला पक्ष, सौंदर्यपक्ष एवं सृजनात्मकता हेतु साधुवाद।

–रूपनारायण काबरा
ए-438, किशोर कुटीर, वैशाली नगर
जयपुर-302021 (राजस्थान)

समृद्ध सुखी परिवार मई-2011 के अंक में संपादकीय में भ्रष्टाचार पर बहुत सटीक विवेचना पढ़ने को मिली। यह अक्षरश: सही है कि भ्रष्टाचार के विरुद्ध लड़ाई अन्ना हजारे की नहीं बल्कि एक अरब बीस करोड़ जनता के हितों की लड़ाई है जिसे हर व्यक्ति को लड़ना होगा। यह तर्क बिल्कुल ठीक है कि इन श्रीहीन स्थितियों पर नियंत्रण के लिए जरूरी है कि प्रधानमंत्री किसी खूबसूरत मोड़ को तलाश लें या कुछ करें या पद छोड़ दें। निस्संदेह आवश्यकता चुनौतियों को समझने की ही नहीं है, आवश्यकता है हमारा मनोबल दृढ़ हो, चुनौतियों का सामना करने के लिए हम ईमानदार हों और अपने स्वार्थ का नहीं, पदार्थ और राष्ट्रहित को अधिमान दें। इस अंक में बहुत से लेख, गीत तथा अन्य सूचनाएं रोचक, सारगर्भित तथा जीवन मूल्यों के पुनरुत्थान में निश्चित रूप से प्रेरणादयक सिद्ध होगी।

-डॉ. जे. पी. सक्सेना
एफ-601, पवित्रा अपार्टमेंट
वसुंधरा एन्क्लेव, दिल्ली-110096

समृद्ध सुखी परिवार पत्रिका पिछले कुछ महीनों से मिल रही है। हर बार पत्रिका प्रगति व विकास के नये आयाम छू रही है, बाहरी और भीतरी साज-सज्जा से समृद्ध पत्रिका सामाजिक, आध्यात्मिक, पारिवारिक और राजनीतिक मुद्दों को कुछ इस प्रकार उठा रही है। इसप्रकार समाधान प्रस्तुत कर रही कि पत्रिका को सपूंर्ण पत्रिका दर्जा प्राप्त हो चुका है। अप्रैल मास का संपादकीय तो कमाल का है, असुरक्षा, भ्रष्टाचार, प्रदूषण की जड़ों में मट्ठा देने के लिए कोई चाणक्य पैदा नहीं होगा, आपको ही यह गरल पीकर समाज के व्यापक हित में अमृत की रक्षा करनी होगी। घुन लगी व्यवस्थाओं को जड़ से उखाड़ फेंकने की आवश्यकता है। कई बार तो सोचना पड़ता है कि न्यायपालिका की ईमानदारी को कार्यपालिका और भ्रष्ट सरकार इसी प्रकार नोंचती रही तो सारा ही समाज और देश कैंसर ग्रस्त न हो जाए। आपका संपादकीय अनेक प्रश्नों को सही परिप्रेक्ष्य में उभरकर सामने ला रहा है। आपकी यह कर्मठता, लगन और परोपकारी दृष्टि अवश्य हो रंग लायेगी

–डॉ. देवेन्द्र आर्य
वाणी सदन, बी-98, सूर्यनगर
गाजियाबाद-201011 (उ.प्र.)

समृद्ध सुखी परिवार पत्रिका का मई-2011 अंक मिला। इस अंक का संपादकीय बहुत अच्छा लगा क्योंकि उसमें भ्रष्टाचार का कोई भी आयाम छूटा नहीं है। आपने सच ही कहा है- 'भ्रष्टाचार के खिलाफ नीति ही नहीं, नीयत भी साफ हो।' अंक की सभी रचनाओं के शीर्षक जीवन को सुखी बनाने संबंधी विचारों से ही समृद्ध है। 'अपनी-अपनी प्रकृति', 'ज्ञान का दीपक', 'सहजता की सौरभ', 'श्रेयस की ओर', 'ऐसी वाणी बोलिए', 'पीड़ा में भी हंसना', 'जिंदगी का गीत है गीता' आदि अनुकरणीय पाठ सरीखे हैं।

गणि राजेन्द्र विजय ने गुजरात में आदिवासी समाज के उत्थान के लिए जो किया और कर रहे हैं वह सर्वसाधन-संपन्न सरकारें नहीं कर पायीं। जब तक वोट के लोभ के स्थान पर नि:स्वार्थ सेवा-भाव और देशप्रेम नहीं होगा तब तक सरकारें विकास का ढ़ोल ही पीटती रहेंगी।

गणि राजेन्द्र विजय केवल गुजरात के एक क्षेत्र-विशेष के दलितों के जीवन को सुखी बनाने का पुनीत कार्य नहीं कर रहे हैं, अपितु 'समृद्ध सुखी परिवार' के माध्यम से समस्त देश के मानव जीवन के कल्याण के लिए भी सतत क्रियाशील है। प्रस्तुत पत्रिका के प्रकाशन का उद्देश्य ही है कि सभी परिवार समृद्ध और सुखी बनें। तभी हमारा देश समृद्ध और सुखी होगा। पत्रिका के प्रत्येक अंक में भी गणि महाराज कोई न कोई सरल उपाय बताते हैं जिसके पालन से हमारा जीवन समृद्ध और सुखी बन सकता है। प्रस्तुत अंक में भी उन्होंने 'सहजता की सौरभ' बिखरा दी है। 'सहज' शब्द में जीवन की सरलता, समता, सद्भाव, सहिष्णुता, निर्मलता, जियो और जीने दो आदि भावनाएं समाहित हैं। यही भावनाएं जीवन की सहजता के आधार हैं और इनसे ही मानव जीवन सुखी बनता है।

प्रस्तुत अंक की अन्य सभी रचनाएं भी इसी उद्देश्य की संपूर्ति का सन्मार्ग सुझाती हैं। वस्तुत प्रत्येक रचना संपादक की सहज और विवेकपूर्ण लेखनी से सज-संवरकर प्रेरणादायी बन गयी है।

सुयशपूर्ण इस सत्कार्य के लिए पाठकों की ओर से आपको भूरिश: बधाई।

–ए. एल. श्रीवास्तव
1-बी, स्ट्रीट-24, सेक्टर-9
भिलाई-490009 (छत्तीसगढ़)

समृद्ध सुखी परिवार पत्रिका का मई-2011 अंक पहली बार देखने को मिला, पढ़ा तो इसकी कायल हो गई। वाकई इस सुंदर सारगर्भित, स्तरीय व मानवमूल्यों से भरी पत्रिका को घर-घर की शोभा बननी चाहिए। आज भारत में भ्रष्टाचार, हिंसा, अविवेक आदि बातें कैंसर की तरह फैल गई है। इन्हें हटाने के लिए अन्ना हजारे, बाबा रामदेव के साथ-साथ समृद्ध सुखी परिवार जैसी कुछ पत्रिकाएं भी होनी चाहिए।

–माला वर्मा
हाजीनगर, 24 परगना (उत्तर)-743135
(प. बंगाल)

आपके द्वारा सुसंपादित 'समृद्ध सुखी परिवार' पत्रिका के सभी अंक मुझे यथासंभव मिलते रहे हैं। इस प्रकाशन में आपकी सूझबूझ, युगीन बोध, सुरुचि एवं सौन्दर्य दृष्टि सभी कुछ द्रष्टव्य है। वैसे भी आप जहां रहते हैं, कार्य करते हैं एवं अलग-सी पहचान बन जाती है। आपके व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व दोनों ही वैशिष्ट्य लिये होते हैं। इस पत्रिका में ये दोनों पक्ष पूर्णतया प्रतिबिम्बित हैं। आपके श्रम, संदर्शन एवं सामाजिक, आध्यात्मिक सरोकारों का यह पत्रिका प्रतिफलन एवं प्रतिबिम्बित है।

-डॉ. नरेन्द्र शर्मा 'कुसुम'
7-च 2, जवाहर नगर
जयपुर-302004 (राजस्थान)

समृद्ध सुखी परिवार' पत्रिका का अप्रैल अंक मिला धन्यवाद। इसमें महावीर जयंती पर विशेष साहित्य, नीरजजी के विचार, अध्यात्म और चिंतन आदि बहुत अच्छे लगे। वैसे तो पूरी पत्रिका ही सुगठित व सुव्यवस्थित है। विवाह पर लघु लेख महत्वपूर्ण लगा बधाई स्वीकारें।

-शुभदा पांडेय
सिलचर (असम)

संपादकीय

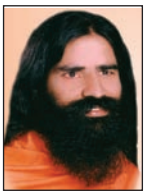

नैतिकता का दीप बुझने न पाए

भ्रष्टाचार और काले धन के खिलाफ जो माहौल बना निश्चित ही एक शुभ संकेत है देश को शुद्ध सांसें देने का। क्योंकि हम गिरते-गिरते इतने गिर गये कि भ्रष्टाचार ही शिष्टाचार बन गया।

इस बार देश नहीं, बल्कि सरकार एक अनिश्चितता एवं असमंजस्य की स्थिति में है और इस स्थिति का कारण लम्बे समय से पांव पसार रहा भ्रष्टाचार, कालाधन एवं अनैतिकता है। एक तरह से भ्रष्टाचार का घड़ा भर चुका और इसके अब फटे, तब फटे की स्थिति के बीच अन्ना हजारे उभरे। उनको मिली सफलता ने बाबा रामदेव को भी आगे कर दिया। लम्बे समय बाद देश में जनान्दोलनों की आवाज सुनाई दी। इन्हीं वजहों से अनशन और भूख हड़ताल को भी एक नया जीवन मिल गया। कहीं-न-कहीं गांधी भी एक बार फिर से जीवंत हो गये है। देखना यह है कि क्या वास्तव में हमारा देश भ्रष्टाचारमुक्त होगा और क्या विदेशों में जमा काला धन देश लौटेगा? यह प्रश्न आज देश के हर नागरिक के दिमाग में बार-बार उठ रहा है कि किस प्रकार देश की रगों में बह रहे भ्रष्टाचार के दूषित रक्त से मुक्ति मिलेगी। वर्तमान सरकार की नीति और नियत दोनों ही ऐसी नहीं लगती कि देश भ्रष्टाचारमुक्त हो। शेक्सपीयर ने कहा था- 'दुर्बलता! तेरा नाम स्त्री है।' पर आज अगर शेक्सपीयर होते तो इस परिप्रेक्ष्य में, कहते 'दुर्बलता! तेरा नाम मनमोहन सरकार है।'

भ्रष्टाचार और काले घन के खिलाफ जो माहौल बना निश्चित ही एक शुभ संकेत है देश को शुद्ध सांसें देने का। क्योंकि हम गिरते-गिरते इतने गिर गये कि भ्रष्टाचार ही शिष्टाचार बन गया। राष्ट्रीय चरित्र निर्माण, नैतिकता, पारदर्शिता की कहीं कोई आवाज उठती भी थी तो ऐसा लगने लगता है कि यह विजातीय तत्व है जो हमारे जीवन में घुस रहा है। जिस नैतिकता, प्रामाणिकता और सत्य आचरण पर हमारी संस्कृति जीती रही, सामाजिक व्यवस्था बनी रही, जीवन व्यवहार चलता रहा, वे आज लुप्त हो गये हैं। उस वस्त्र को जो राष्ट्रीय जीवन को ढके हुए था आज हमने उसे तार-तारकर खूंटी पर टांग दिया है। मानों वह हमारे पुरखों की चीज थी, जो अब इतिहास की चीज हो गई। लेकिन देर आये दुरस्त आये कि भांति अब कुछ संभावनाएं अन्ना ने जगाई है, इस जागृति से कुछ सबक भी मिले हैं और कुछ सबब भी है। इसका पहला सबब तो यही है कि भ्रष्टाचार की लडाई चोले से नहीं, आत्मा से ही लड़ी जा सकती है। दूसरा सबब यह है कि धर्म और राजनीति को एक करने की कोशिश इस मुहिम को भोंथरा कर सकती है। तीसरा सबब है कि कोई गांधी या कोई गांधी बन कर ही इस लड़ाई को वास्तविक मंजिल दे सकता है।

आदर्श सदैव ऊपर से आते हैं। पर शीर्ष पर आज इसका अभाव है। वहां मूल्य बन ही नहीं रहे हैं, फलस्वरूप नीचे तक, साधारण से साधारण संस्थाएं, संगठनों और मंचों तक स्वार्थ सिद्धि और नफा-नुकसान छाया हुआ है। सोच का मापदण्ड मूल्यों से हटकर निजी हितों पर ठहर गया है। बाबा ने इस बात को पुष्ट किया है। क्योंकि वे खुद संन्यासी होने के बावजूद फकीर नहीं रह पाए। वह अरबपति बन गये, कारोबारी हो गये, कोरपोरेटर हो गये। उन्होंने तो भारतीय परम्परा के अध्यात्म और योग को एक प्रोडक्ट बना दिया। वे इतने ताकतवर हो गये कि बाबा बिना किसी सरकार के सरकार बन गये। उन्होंने अपनी स्वतंत्र सेना संगठित करने तक का ऐलान कर दिया। यह अलग बात है कि भारत की आदर्श परम्पराओं, सांस्कृतिक मूल्यों और अध्यात्म को बेचने वाले वे अकेले नहीं है। बाबा के साथ जो विडम्बना है वह यह है कि वे यह सब करते हुए भी गांधी बनना चाहते हैं, गांधी दिखना चाहते हैं। पैसा और ताकत ही अगर देश में ज्वार पैदा कर पाते, तो आज तक कई अरबपति देश की सत्ता पर काबिज हो गये होते।

अब तक भ्रष्टाचार जनान्दोलन नहीं बन पाया क्योंकि आमजनता को विश्वास था कि गांधी का यह देश अब भी ज्यादा नहीं बदला है। नैतिकता की पूंजी अब भी उसकी सबसे बड़ी पूंजी है। लेकिन वर्तमान सरकार ने खेलों के दौरान और अपनी दैनंदिन कार्यप्रणाली में भ्रष्टाचार का इतना खुला खेल खेला कि अब तो लोकतंत्र में अडिग विश्वास रखने वाले भी सरकार के चरित्र को देखकर शंकित हो उठे हैं। क्या होगा? कौन लायेगा इस देश को भ्रष्टाचार मुक्त स्थिति में? सरकार का पूरा कार्यकाल भ्रष्टाचार, अविश्वास, महंगाई, अनिश्चितता की पीड़ा में बीता। नित नये भ्रष्टाचार के कारनामों के बावजूद सरकार मौन? आखिर कब तक?? इन सबके बीच एक छोटी-सी किरण जगी है, जो सूर्य का प्रकाश भी देती है और चन्द्रमा की ठण्डक भी। और सबसे बड़ी बात, वह यह कहती है कि 'अभी सभी कुछ समाप्त नहीं हुआ। अभी भी सब कुछ ठीक हो सकता है।' अन्ना हजारे के इस विश्वास में सुखी परिवार अभियान भी अपना एक स्वर मिलाना चाहता है। गणि राजेन्द्र विजयजी इस अभियान को लेकर आदिवासी अंचलों में एक स्वस्थ जीवनशैली स्थापित करने के अभियान के साथ-साथ भारतीय परिवार संस्था को सुदृढ़ बनाने के उपक्रम में जुटे हैं। वे स्वस्थ और आदर्श मूल्यों को स्थापित करने के लिये संकल्पबद्ध है, उनका अभियान कोई रणनीति नहीं है, जिसे कोई वाद स्थापित कर शासन चलाना है। यह तो इंसान को इन्सान बनाने के लिए ताजी हवा की खिड़की है।

किंपलिंग की विश्व प्रसिद्ध पंक्ति है-'पूर्व और पश्चिम कभी नहीं मिलते।' पर मैं देख रहा हूं कि जनता और जन-संगठन मिलकर संवाद स्थापित कर रहे हैं। भ्रष्टाचार के खिलाफ खड़े लोग एक दूसरे के कान में कह रहे हैं, इस देश ने भ्रष्टाचार की अनेक आंधियाँ अपने सीने पर झेली हैं, तू तूफान झेल लेना, पर भारत की ईमानदारी, नैतिकता एवं सदाचार के दीपक को बुझने मत देना।

वल्लभ उवाच

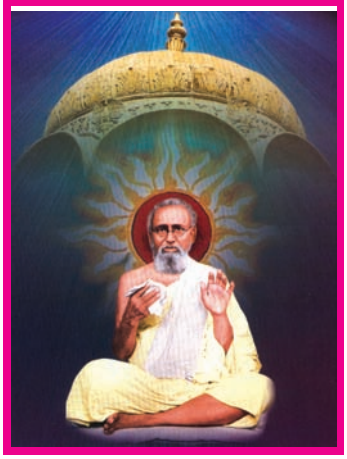

आगे बढ़ो, लक्ष्य तुम्हारे सामने है!

'हम क्या करें?'

यह प्रश्न अक्सर लोग पूछते हैं।

मुझसे यह प्रश्न क्यों पूछते हो? अपने आपसे यह पूछो।

मैं तो इतना ही कह दूंगा कि आपने अभी किया ही क्या है? कुछ नहीं...अपार धन इकट्ठा करना या दिन-रात अपने सुख-ऐश्वर्य के लिए प्रसाधन जुटाना और उनका भोग-उपभोग करना ही तो अन्त नहीं, आपके कर्मों का।

आपने शायद अपनी दृष्टि में अथाह धर्म अर्जित किया होगा और अब आप अपने मन में सुख और संतोष अनुभव कर रहे होंगे, अपनी विजय पर।

परन्तु! अपनी आत्मा से पूछ कर देखिये, यह सब प्राप्त होने पर भी आपको आत्म सुख मिलता है या नहीं।

क्या आपकी आत्मा में शान्ति है?

नहीं...?

तो फिर आपने पाया क्या?

उलटे संसार में आपने सब कुछ पाकर भी लक्ष्य प्राप्ति नहीं की।

आप पराजित हैं–क्योंकि आत्मशान्ति नहीं पा सके तो क्या पाया?

मैं कहता हूं, आगे बढ़िए।

ज्ञानी वही है, जो अपने को जानकर अपने स्वरूप में स्थित होने का प्रयत्न करे, जब प्रयत्न अभी बाकी हैं तो लक्ष्य प्राप्ति अभी बाकी है। यदि मान ही लिया जाए कि आपने लक्ष्य प्राप्ति कर ली है, तो आपके आस-पास और भी तो कितने हैं जिन्हें सन्मार्ग दर्शन आपका कर्त्तव्य है।

परोपकार ही संतों का सच्चा आभूषण है।

न मालूम कितने असंख्य प्राणी इस संसार में अब भी अंधकार में भटक रहे हैं। उन्हें भी सही मार्ग का बोध कराना है और फिर यही तो–

परमात्म सुख का मार्ग है।
आगे बढ़ो...देखो, दिव्य आनन्द प्राप्त होगा।
इस जीवन का ध्येय नहीं है,
थक कर पथ में रुक जाना।
जाना है उस तक मेरे मन-
जिसके आगे राह नहीं है।
अरिहंतों की कृपा दृष्टि है-
लक्ष्य एक है, चाह वही है।

कपड़े बेशक गंदे हों, आत्मा साफ होनी चाहिए

मार्क ट्वेन

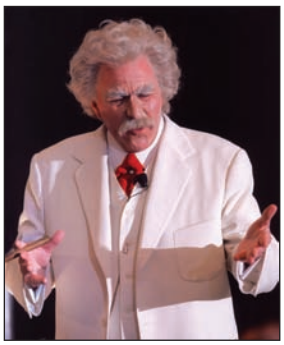

मार्क ट्वेन एक मशहूर अमेरिकी लेखक रहे हैं। उनका असली नाम सैमुअल क्लेमेंस था, लेकिन वह अपने 'पेन नेम' मार्क ट्वेन से ही जाने जाते हैं। उनका जन्म 30 नवंबर 1835 को हुआ। उन्होंने पेंटिंग, टाइपिंग, प्रिंटिंग, माइनिंग जैसे तमाम कामों में हाथ आजमाया, लेकिन कहीं मन नहीं लगा। फिर उन्होंने अखबार में लिखना शुरू किया और उनके ट्रैवलॉग काफी पसंद किए गए। बाद में उन्होंने लेखक और पब्लिक स्पीकर के तौर पर काफी नाम कमाया।

- वही करो, जो सही हो। यह कुछ लोगों को अचंभे में डाल देगा तो कुछ को संतुष्ट कर देगा।
- कोई भी इंसान उससे ज्यादा कभी ईमानदार नहीं हो सकता, जब वह कहे कि मैं झूठा हूं।
- अपनी रजामंदी के बिना कोई भी शख्स आराम या आनंद की स्थिति में नहीं होता है।
- कोई इंसान अपनी बातचीत में जिन विशेषणों का इस्तेमाल करता है, उन्हीं से उसके चरित्र की पहचान होती है।
- आपके कपड़े बेशक गंदे हों, लेकिन आत्मा साफ होनी चाहिए।
- हेल्थ की किताब पढ़ते हुए सावधानी बरतें। गलत छपाई की वजह से आपकी जान भी जा सकती है।
- जो इंसान पढ़ता नहीं है और जो पढ़ नहीं सकता (अनपढ़), उसमें कोई फर्क नहीं है।

- एक गोल आदमी से एक रात में चौकोर डिब्बे में घुसाने की उम्मीद नहीं करनी चाहिए। इसके लिए उसे अपनी शेप बदलने का वक्त देना होगा।
- उम्र मसले के ऊपर सोच का मामला है। अगर आप सोचेंगे नहीं तो यह कोई मसला ही नहीं है।
- गुस्सा एक ऐसा तेजाब है, उससे कहीं ज्यादा नुकसान उस बर्तन को पहुंचाता है, जिसमें वह होता है।
- मुंह खोलकर हर शक को मिटा देने से चुप रहकर बेवकूफ समझे जाना कहीं बेहतर है।
- हर चीज की अपनी सीमा होती है। लोहे को सोना नहीं बना सकते।

'समृद्ध सुखी परिवार' मासिक पत्रिका निम्न वेबसाइट पर भी उपलब्ध है:
www.sukhiparivar.com
www.herenow4u.net
www.checonjainam.org

दिशाबोध

गणि राजेन्द्र विजय

विनम्रता है मोक्ष का द्वार

'मृदोभावः मार्दवम्' विचारों में मृदुता, विनयशीलता, समता, समरसता, नमनीयता मार्दव धर्म कहलता है। प्रकृति का नियम है जहाँ मृदुता होती है वहाँ उपलब्धि भी उत्कृष्ट होती है। संसार की हर सुन्दर वस्तु मृदुता के सौन्दर्य से परिपूर्ण है। आत्मा का स्वभाव भी अनन्त सुख की परिपूर्णता मार्दव धर्म से ओतप्रोत है। उत्तम मार्दव धर्म आत्मा का स्वाभाविक गुण है और मान कषाय विभाव रूप में उसके वास्तविक गुण को आच्छादित कर देता है।

भगवान ऋषभदेव ने अपनी प्रवचन-सभा में कहा - ''यहाँ बैठा भरत चक्रवर्ती का पुत्र 'मारीच' अंतिम तीर्थंकर बनेगा।'' बस मारीच मान-कषाय से अकड़ गया, करोड़ों वर्ष लगाता रहा संसार के चक्कर और जब सिंह की पर्याय में युगल मुनि के सम्बोधन ने उसके मान को आंसुओं से धोकर नमनीयता उत्पन्न कर दी वह साक्षात् मार्दव धर्म का स्वरूप बन गया जीवमात्र के प्रति क्षमा और उदारता उत्पन्न होते ही उत्कृष्टता बढ़ती गयी। स्पष्ट है मान कषाय संसार को बढ़ाने वाली है और मार्दव धर्म परिभ्रमण का छेदन करने वाला है। कहा भी है-

मार्दवधर्मेण समस्तानि वृतानि सम्पूर्णतां यान्ति।
मार्दवधर्मेण मुक्तिस्त्री स्वयमेव दृढ़ालिंगन दत्ते।।

अर्थात् - मार्दव धर्म के होने पर सभी व्रत सम्पूर्णता को प्राप्त होते हैं और मार्दव धर्म से युक्त भव्यात्मा को मुक्ति लक्ष्मी स्वयं ही दृढ़ आलिंगन बद्ध करती है।

आत्मा सूर्य के समान है, अन्तरंग और बहिरंग ज्ञान लक्ष्मी से सुशोभित है परन्तु अज्ञान रूप उसके अनन्त ज्ञान, दर्शनादि गुण को आच्छादित कर देता है। मुख्यतः अनादिकालीन कषायें इसे प्रद्योदित होने से रोकती हैं। क्रोध को बढ़ाने में शत्रु निमित्त होते हैं परन्तु मान-कषाय की वृद्धि में स्वजन और प्रियजन निमित्त होते हैं। 'मान' 'मद' के रूप में प्रखर होता है अर्थात् एक नशा सा चढ़ जाता है जिसमें व्यक्ति आपा खो बैठता है।

लंकापति रावण सीता को चुरा लाया, वह हर तरह से मनाकर हार गया, सीता समर्पण को तैयार नहीं, इधर रावण भी अपनी प्रतिज्ञा से बंधा हुआ है वह किसी प्रकार जोर-जबरदस्ती नहीं कर सकता। स्वजन, सहोदर और मंत्री कहते है - ''जब सीता का साहचर्य संभव ही नहीं है तो वापिस राम के पास भेज दो।'' परन्तु अब प्रश्न सीता की उपादेयता का नहीं, 'मान' का है, मूँछ ऊँची रखने का है। वह कहता है ''राम पर विजय प्राप्त कर लूं फिर सीता को ससम्मान भेज दूंगा, परिणाम हुआ कुल का सत्यानाश।

आगम में मान को मीठा विष कहा है जो वर्तमान में तो मधुर और सुखद लगता है अन्तः दुखदायी ही होता है। मान और दीनता दोनों ही मार्दव धर्म के विरोध हैं, कोमलता और सहजता ही मार्दव धर्म है, मार्दव में समता का भाव है न कोई बड़ा, न कोई छोटा। सर्व जीवों से मित्रता, गुणियों को देखकर प्रसन्नता, कष्ट में पड़े जीवों के प्रति कृपा और विपरीत वृत्ति वाले लोगों के साथ मध्यस्थता का भाव, क्षमा का भाव यदि यह संभव हो जाता है तो मार्दव धर्म आत्मा में अभिव्यक्त हो गया, ऐसा जान लेना चाहिए। लौकिक और पारलौकिक दोनों ही दृष्टियों से मार्दव धर्म सुखद फलश्रुति प्रदायक है। लौकिक रूप में आयु, बुद्धि, विद्या, शौर्य, बल, सुख और यश कीर्ति की वृद्धि विनयशीलता से होती है और अलौकिक रूप में सुगति और सिद्धत्व प्रदायक है। इसीलिए कहा गया है-

उत्तम मार्दव विनय प्रकाशै,
नाना भेद ज्ञान सब भाषै।

आचार्य जिनसेन के महापुराण में एक स्थान पर उल्लेख है कि - ज्ञानमद करना ज्ञान पर आवरण डालना है, परदा डलना है।

भर्तृहरि ने भी एक स्थान पर लिखा है - जब मुझे अल्पज्ञान था, तब में हाथी की भांति गर्वोन्मत्त होकर चलता था, जब अधिक जानने लगा तो चींटी की भांति चलने लगा।

आचार्य कुन्दकुन्द ने 'बोध पाहुड़' में कहा है - जो (धर्म) दया से विशुद्ध है, वस्तुतः वही धर्म है; जिसमें दया को कोई स्थान नहीं है, वह धर्म नहीं हो सकता। यह दया अन्तरंग से होनी चाहिए, बहिरंग से नहीं। चित्त में दया-भाव, मृदु-भाव रहने चाहिए। भूमि जितनी मृदु होगी, वहां फसल उतनी ही अच्छी होगी, इसीलिए तो कृषक अपनी भूमि पर हल चला-चलाकर उसको मृदु बनाता है, तत्पश्चात् उसमें बीज बोता है। अतः यह मृदुता, विनम्रता सर्वोपरि होने के कारण, श्रेष्ठ होने के कारण आवश्यक रूप से ग्राह्य है।

जिसका अन्तरंग दया से परिपूर्ण है, उसके बाह्य व्यवहार में दया स्वयमेव आ जाएगी। कठोरता व निर्मलता, दोनों की उत्पत्ति अन्तर से ही होती है। इसीलिए कहा गया है कि धर्म-अधर्म सब मन में है, बाहर नहीं है।

उपयोग को विमल, शुद्ध दया से ठसाठस भरना उसकी परिपूर्णता का नाम ही मार्दवगुण है। इस मार्दवगुण का बाधक है - अल्प ज्ञान। ज्ञानी कभी अपने ज्ञान का अभिमान नहीं करते। ज्ञान का अभिमान करना ज्ञान पर आवरण डालना है। एक कहावत है - 'अधजल गगरी छलकत जात'। घड़े में जब पानी कम होता है तो वह छलकता है।

आगमों की शिक्षा है - 'लोकेषणा से बचो'। जो तपस्वी, ज्ञान के अभिमान से, लोकेषणा से बचे, वे तपस्वी ही अपने लक्ष्य के प्रति सफल हो सकते हैं - ज्ञानमद, पूजामद के साथ कुलमद भी बहुत बड़ा खतरा है। आचार्य पूज्ययाद ने समाधितंत्र में कहा है-

''जब तक तुम इस देह से सम्बन्धित होने के कारण इसका अभिमान-दुरभिमान करते रहोगे, तुम्हारी समाधि संभव नहीं है। अभिमान के कारण अनेक भवों में भ्रमण करते रहोगे।''

ज्ञान, पूजा व कुलमद के अलावा जातिमद अर्थात् उच्च जाति का अभिमान भी मार्दव धर्म में बाधक है। इसी प्रकार बलमद, अधिकार मद, तपमद आदि असंख्य मद हैं, और ये सभी मद घातक हैं।

आचार्य कुन्दकुन्द ने मूलाचार में कहा है -

'विणओ मोक्ख द्वारं।'

मोक्ष का घर कहाँ हैं? विनम्रता में है, विनय में है, मृदुता में है। यह विनम्रता, मृदुता, प्राणी के मोक्ष के द्वार पर ले जाकर खड़ा कर देती है।

लोक व्यवहार में भी हम देखते हैं कि जो अधिक ज्ञान अथवा वैभव सम्पन्न व्यक्ति होता है, वह बहुत विनम्र होता है।

किरातार्जुवीर्य में उल्लेख है- 'धनुष जितना झुकता है, उतना ही दूर

हृदय की कोमलता और नम्रता ही संसार में श्रेष्ठ है। नम्रता स्थिर रहने वाली चीज है। जिस पेड़ में फल लगते हैं और जितने ज्यादा फल लगते हैं, उतना ही वह पेड़ झुकता जाता है और जिस पेड़ में फल नहीं लगते, वह सीधा तना हुआ रहता है।

बाण फेंकता है।' इसी प्रकार जो विनम्र होता है, वह अपने प्रत्येक कार्य में सफल होता है।

कहा गया है – 'विद्या ददाति विनयं', जो विद्यावान्-बुद्धिमान होता है, वह विन्रम होता है। विद्या विनय देती है। स्वामिमान रखिए, दुराभिमान नहीं। दुराभिमान आपको गलित कर देगा। जितने भी व्रत हैं, संयम-नियम हैं, वे सब मादर्व धर्म के माध्यम से ही ग्रहण किये जा सकते हैं। जहाँ मार्दव धर्म नहीं है, मृदुता नहीं है, वहां न संयम है, न कोई व्रत।

तेवीफल में रखा हुआ दूध भी अपना स्वाद छोड़ देता है, उनके संसर्ग से कडुआ हो जाता है। दूध को यथावत् रखने हेतु पात्र भी ऊँचा होना चाहिए। दूध के समान ही ये पवित्र व्रत एक संयम भी मृदुता में ही पल सकते हैं। जहाँ कोमलता नहीं होगी, मृदुता नहीं होगी, वहाँ कोई व्रत व ध्यान स्थिर नहीं हो सकेंगे। मार्दव धर्म में पाँच इन्द्रियों को संयमित करने की शक्ति है।

श्रमण साधना का अर्थ है – समता की साधना और समता का आवश्यक अंग है मन की कोमलवृत्ति। समता का भाव मन के कोमल परिणामों पर आधारित है। यदि मृदुता में त्रियोग में से किसी एक योग की भी वक्रता है तो वह मार्दव मायाचार है। मार्दव का अर्थ है – सर्व भावने मृदुता।

लोग खुशामदी होने से भी मृदुता का व्यवहार करते देखे जाते हैं परन्तु वह मार्दव धर्म नहीं कहा जा सकता और सर्वत्र समभाव से विनय-परायण होने से मार्दव को चाटुकारिता नहीं कह सकते। उत्तम मार्दव धर्म एक सद्गुण है वह प्रयोजन की अपेक्षा से कठोर या कोमल नहीं होता। 'जात्यापिमदावेशादभिमाना भावो मार्दव' – जाति आदि आठ प्रकार के मद का अभाव होना मार्दव है।

जब मनुष्य थोड़ा जानता है तब सर्वज्ञ होने का अभिमान करता है किन्तु जब वह उच्च कोटि के विद्वानों के पास कुछ और सीखता है तब शास्त्रज्ञान की समुद्र-गम्भीरता और अपनी अंग की लघुता देखकर गर्व-रहित हो जाता है। अभिमान की लकड़ी निकाल देने पर मृदुता की विभूति प्राप्त होती है।

'ज्ञानार्णव' में कहा गया है-

जिनकी बुद्धि धर्म परायण है, वे ही अभिमान पर विजय प्राप्त कर सकते हैं।

अभिमान का उच्छेद करने के लिए ज्ञान की समर्थ है परन्तु यदि वही अभिमान का सहायक हो जाए तो मार्दव के मंदिर का शिलान्यास कौन करेगा? उत्तम जाति, कुल, बल इत्यादि का सही उपयोग मान कषाय को पराजित करने में है, उसके अद्य होने में नहीं।

इतिहास इस बात का साक्षी है कि मान-कषाय ने भूतकाल में अनेक युद्धों को जन्म दिया। महाभारत कौरवों के दुराभिमान का ही परिणाम रहा है। मान और प्रतिष्ठा के लघु प्रश्नों को लेकर भाई-भाई में वैर पैदा हो जाता है, समाज टुकड़ों में बंट जाता है और राष्ट्र में गृह-कलह के बादल मंडराने लगते हैं। ■

मां के कदमों के नीचे है जन्नत

युधिष्ठर लाल कक्कड़

हमारे वेदों में मां को पूज्य, स्तुति योग्य और आह्वान करने योग्य कहा गया है। महाभारत में जब यक्ष ने युधिष्ठिर से सवाल किया कि भूमि से भी भारी कौन है? तो युधिष्ठिर ने जवाब दिया- माता गुरुतरा भूमेः। अर्थात् मां इस भूमि से भी कहीं अधिक भारी होती है। महर्षि मनु कहते हैं, 'दस उपाध्यायों के बराबर एक आचार्य होता है, सौ आचार्यों के बराबर एक पिता और हजार पिताओं से अधिक गौरवपूर्ण एक माता होती है।'

वेदों में प्रार्थना की गई है – 'मां रसमयी, स्नेहमयी और संतानों के हितार्थ समर्पण करने वाली होती है। वह त्यागमयी, दयामयी, क्षमामयी, सत्यमयी और धर्ममयी हो।' ऋग्वेद की एक ऋचा में प्रार्थना की गई है – 'जल के समान शुद्ध करने वाली माताएं हमारे अंतःकरणों को शुद्ध करें।'

आदि शंकराचार्य कहतें हैं, 'कुपुत्रो जायते क्वचिदपि कुमाता न भवति।' अर्थात पुत्र तो कुपुत्र हो सकता है, पर माता कभी कुमाता नहीं हो सकती। तैत्तिरीयोपनिषद् में कहा गया है, 'मातृ देवो भवः।' मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम लंका जीतने के बाद राज्य सुख भोगने के प्रसंग में अनुज लक्ष्मण के प्रस्ताव को ठुकराकर कहते हैं – 'जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी।' अर्थात् जननी और जन्मभूमि स्वर्ग से भी बढ़कर होते हैं।

शतपथ ब्राह्मण के वचन 'मातृमान पितृमानाचार्यवान् पुरुषो वेद' का अभिप्राय है कि इस संसार में तीन उत्तम शिक्षक अर्थात् माता, पिता और गुरु हों, तभी मनुष्य सही अर्थ में मानव बनता है। महर्षि दयानंद लिखते हैं, 'वह संतान अति सौभाग्यशालिनी है, जिसके माता-पिता धार्मिक और विद्वान हैं। जितना माता से संतानों को उपदेश और उपकार पहुंचता है, उतना किसी अन्य से नहीं। इसलिए मातृमान वह होता है, जिसकी माता गर्भाधान से लेकर जब तक गर्भ के शेष विधान पूरे न हो जाएं, तब तक संयत और सुशील व्यवहार करे।' मातृ गर्भ में संस्कारित होने का सबसे बड़ा उदाहरण महाभारत में अभिमन्यु का मिलता है, जिसने अपनी मां से गर्भ में ही चक्रव्यूह तोड़ने की विधि सीख ली थी।

कुरान में सूरह अहकाफ आयत-15 में अल्लाह फरमाता है, 'हमने इंसान को आदेश दिया है कि अपने मां-बाप के साथ नेक बर्ताव करे, उसकी मां ने बहुत कष्ट उठाकर उसे अपने पेट में रखा और बहुत तकलीफ उठाकर ही उसे जन्म दिया और उसके (यानी इंसान के) गर्भ में पलने और दूध छुड़ाने में तीस महीने लग गए।' एक व्यक्ति हजरत मुहम्मद साहब के पास आया और पूछा, 'इंसानों में मेरे अच्छे बर्ताव का सबसे ज्यादा हकदार कौन है?' हजरत मुहम्मद साहब ने जवाब दिया 'तेरी मां।' उस व्यक्ति ने फिर पूछा कि मां के बाद फिर कौन? उन्होंने फरमाया 'तेरी मां।' तीसरी बार पूछने पर भी उन्होंने फरमाया – 'तेरी मां', चौथी बार पूछने पर हजरत मुहम्मद साहब ने फरमाया 'तेरा पिता।' मतलब साफ है कि हदीस की रोशनी में मां का स्थान पिता के मुकाबले में तीन गुना ऊंचा है।

हजरत मुहम्मद साहब ने एक और हदीस में फरमाया, 'मैं वसीयत करता हूं इंसान को मां के बारे में कि वह उससे नेक बर्ताव करे।' अपने मां-बाप का हक पहचानना, उनके साथ अच्छा बर्ताव करना, उनकी सेवा करना अल्लाह की निगाह में इतना महत्वपूर्ण है कि उसने अपनी इबादत का आदेश देने के साथ ही मां के बारे में स्पष्ट हिदायत दी। मां का अनादर या उनकी बात न मानना और उन्हें कष्ट पहुंचाना बहुत बड़ा गुनाह है। यह इतना बड़ा गुनाह है कि अल्लाह की इबादत करने के बावजूद भी ऐसे व्यक्ति का जन्नत में जाना बहुत मुश्किल होगा। हजरत मुहम्मद साहब ने एक इदीस में फरमाया, 'जन्नत मां के कदमों के नीचे है।' इस्लाम ने जन्म देने वाली मां के साथ-साथ उस औरत को भी बहुत ऊंचा स्थान दिया है जिसने जन्म तो नहीं दिया पर उसे अपना दूध पिलाया हो। इस्लाम ने उसे 'रिजाई मां' कहा है। उसे भी उतना ही आदर, सम्मान और सेवा पाने का हक है। ■

आचार

राजीव मिश्र

सर्वश्रेष्ठ धर्म है आचरण

मनुष्य जीवन को सुखी, सुंदर एवं सफल बनाने के लिए अन्यान्य योग्यताओं के साथ-साथ सदाचार की विशेष आवश्यकता है। सदाचार का अभिप्राय केवल सच्चरित्रता अथवा दोषरहित जीवन ही नहीं है, बल्कि इसका विशिष्ट अभिप्राय: शास्त्रों द्वारा और आप्त पुरुषों द्वारा प्रतिपादित कर्मों का अनुष्ठान करना है।

आचार: परमोधर्म: अर्थात आचरण ही सर्वश्रेष्ठ धर्म है। धर्म एवं सदाचार एक-दूसरे के पूरक हैं। पुराणों में कहा गया है कि सदाचारी अर्थात् सात्विकता और ईमानदारी से संयमपूर्ण जीवनयापन करने वाला ही सच्चा भगवद्भक्त है। कोई सदाचारी विद्वान न हो तो कोई बात नहीं, किन्तु धर्मग्रंथों का ज्ञाता यदि सदाचारी नहीं है तो कोरा ज्ञान उसका कल्याण नहीं कर सकता। जो व्यक्ति भौतिक सुखों तथा सौन्दर्य अभिमान का त्याग कर आत्मा-परमात्मा को जान लेता है, जिसका अंत:करण पवित्र हो जाता है, वही असल में देवत्व को प्राप्त होता है।

सांसारिक वस्तुएं अस्थायी और क्षणिक हैं। बाहरी वस्तुओं में जितना सुख अनुभव किया जाए वह उतना ही आत्मा को दु:ख देने वाला होता है। बाहरी सुखों में अपने आप को लगा देना अज्ञान है, अंधकारमय है। ऐसे सांसारिक भोग आत्मा का हनन करने वाले हैं और इनसे आत्मा की उन्नति नहीं हो सकती। यही बंधन के द्वार होते हैं। जब तक इन्द्रियां वश में नहीं हो जाती, सत्य मार्ग नहीं अपनाया जा सकता। जब तक राग-द्वेष मन से नहीं निकल जाते, तब तक यह मस्त मन इन्द्रियों को वश में करने में असमर्थ हैं, श्री हरि को पाना असंभव है। जब मन इन्द्रियों को वश में कर लेता है और मन बुद्धि के अधीन होकर काम करने लगती है, तब आत्मा का विकास होने लगता है और ज्ञान रूपी नेत्र (मन-बुद्धि) खुल जाते हैं। आत्मा प्रसन्न होती है और आत्म तत्व का ज्ञान होता है।

भौतिक जगत से मनुष्य की मौलिक आवश्यकताएं पूर्ण होती हैं। इसीलिए इनका होना आवश्यक है। लेकिन भौतिक जगत में आनंद नहीं है। दिव्य आनंद की प्राप्ति के लिए दिव्यता के जगत से ही जुड़ना होगा। हर मनुष्य जीवन में आनंदित ही रहना चाहता है। इसलिए धर्मग्रंथों का सहारा लेता है। उनको पढ़ता है, सुनता है। महापुरुषों की शिक्षा को भी सुनता है लेकिन ज्ञान की गहराई तक नहीं पहुंच पाता, इसलिए जीवन में ज्ञान को उतार नहीं पाता और जीवन में रूपान्तरण नहीं कर पाता। 99 प्रतिशत लोग केवल धर्म के मार्ग की बाहरी क्रियाओं तक ही सीमित रह जाते हैं। आंतरिक स्थिति में परिवर्तन नहीं ला पाते।

> **माला पहन लेना, चोटी रख लेना, गेरुआ वस्त्र धारण कर लेना, प्रतिदिन आरती उतारना, फूल भगवान को अर्पित करना काफी नहीं है। अंत:करण की शुद्धि पर ध्यान देना आवश्यक है। जब तक अंतकरण की शुद्धि नहीं होती तब तक मनुष्य भगवत् कृपा का अधिकारी नहीं बन सकता।**

मनुष्य जीवन भर आरती गाता रहे। जब तक तन-मन-धन से भगवान की सेवा, गुरु की सेवा, राष्ट्र की सेवा, जनकल्याण के कार्य नहीं होंगे जीवन में रूपान्तरण नहीं हो सकता। मंदिर जाना, आरती पूजा करना, फूल माला चढ़ाना बहुत अच्छे कृत्य हैं लेकिन भीतरी रूपान्तरण के लिए मानवता के गुणों का होना परम आवश्यक है। बहुत बार तो बाहरी क्रियाएं संसार प्राप्ति के लिए ही होती हैं। प्रारब्ध तथा पुरुषार्थ के अनुसार इच्छापूर्ण भी हो जाती है लेकिन भीतरी परिवर्तन आना तो कुछ और ही बात है।

माला पहन लेना, चोटी रख लेना, गेरुआ वस्त्र धारण कर लेना, प्रतिदिन आरती उतारना, फूल भगवान को अर्पित करना काफी नहीं है। अंत:करण की शुद्धि पर ध्यान देना आवश्यक है। जब तक अंतकरण की शुद्धि नहीं होती तब तक मनुष्य भगवत् कृपा का अधिकारी नहीं बन सकता। भौतिक जगत से मन को मोड़कर भगवान की सेवा में लगना भीतरी रूपान्तण करना है। जितनी मात्रा में मन संसार से हटता है, उतनी ही मात्रा में भगवान में लगता है, उतनी ही मात्रा में इसका रूपान्तरण होता है और उतनी ही मात्रा में मनुष्य आनंद की प्राप्ति करता है।

इसलिए व्यक्ति को चाहिए कि वह जीवन भर मात्र बाहरी क्रियाओं पर ही न बैठा रहे। इनसे आगे बढ़े, मन को दिव्य प्रेम से जोड़े, प्राकृत मन, बुद्धि, इन्द्रियों को गुरु भक्ति, राष्ट्र भक्ति, भगवत भक्ति द्वारा दिव्य बनाए। यदि वह बाहरी क्रियाएं ही करता रहे और मन, बुद्धि तथा इन्द्रियां मायिक ही बनी रही तो विशेष लाभ न होगा। जब ये साधना भक्ति द्वारा दिव्य बन जायेंगी तो स्वयं ही दिव्य जगत से जुड़ जायेंगी। दिव्य जगत ही आनंद का सागर है, उस असीम आनंद के सागर में डूबना ही जीवन का परम चरम उद्देश्य है। उस असीम सागर को पाकर फिर और कुछ पाना शेष नहीं रहता।

-245-बी, बाघम्बरी हाउसिंग स्कीम
इलाहाबाद-211006 (उ.प्र.)

शास्त्रोक्ति

नरेश जनप्रिय

मनुष्य जीवन में शंख की महत्ता

''शंख समुद्रजः कम्बुः सुनादः पावनध्वनिः।
शंखों नेत्रयो हिमः शीतो लघुः पित्त कफास्यजित।।''

अर्थात् शंख, समुद्रज, कम्बु, सुनाद तथा पावन ध्वनि ये सब शंख के संस्कृत नाम हैं, जो नेत्र के लिए हितकर, शीतल, लघु एवं पित्त, कफ तथा रक्त विकार को दूर करने वाला होता है।

यह बात आयुर्वेद में कही गयी है।

शास्त्रों में वर्णित है कि तीनों लोकों के समस्त तीर्थ भगवान हरि की आज्ञा से शंख में निवास करते हैं। इनके दर्शन मात्र से मनुष्य समस्त पापों से विमुक्त हो जाता है।

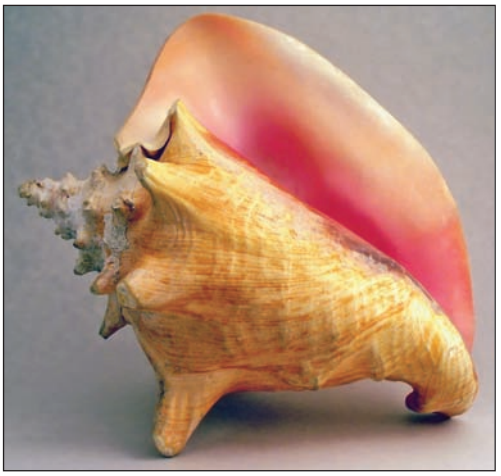

धर्मग्रंथानुसार शंख को पूजा करते समय अनिवार्य रूप से बजाने का प्रचलन है। कहा जाता है कि इसकी ध्वनि सुनकर देवगण बेहद प्रसन्न होते हैं। जहां तक शंख की उत्पत्ति का प्रश्न है, उस संबंध में अनेक कथाएं मिलती हैं।

ब्रह्मवेवर्त्त पुराण के प्रकृति खंडानुसार एक बार भगवान शंकर और शंखचूड़ नामक दैत्य के बीच भयंकर युद्ध हुआ। इस युद्ध में शंकरजी ने अपने त्रिशूल से शंखचूड़ का वध करके उसकी अस्थियों को समुद्र में फेंक दिया। कालान्तर में ये अस्थियां ही शंख बन गये।

शायद इसी कारण समुद्र मंथन के दौरान निकले चौदह रत्नों में से एक शंख भी है। शंख को नव निधियों में भी एक निधि माना जाता है।

प्रत्यक्षदर्शियों एवं पौराणिक अभिलेखों के अनुसार समुद्र मंथन के दौरान जिस शंख रत्न की प्राप्ति हुई थी, वह आज भी बांका जिलान्तर्गत बौंसी प्रखंड में स्थित सृष्टि का गवाह तथा समुद्र की मथानी मंदारपर्वत पर शंख कुंड में विद्यमान है। इस शंख का अनुमानित वजन दो टन के लगभग माना गया है।

वास्तव में शंख मुख्य रूप से दो प्रकार के होते हैं- पहला दक्षिणावर्त्त एवं दूसरा वामावर्त्त। जिसका मुंह दक्षिण की ओर खुलता है उसे दक्षिणावर्त तथा जिसका मुंह बांयी ओर खुलता है उसे वामावर्त्त शंख कहा जाता है। इन दोनों शंखों में दक्षिणावर्त्त शंख दुष्प्राय है। यह सबों को नहीं मिलता। परम पुण्य के प्रताप से ही किसी बड़भागी व्यक्ति को यह मिलता है।

मान्यता है कि जिसके घर में दक्षिणावर्त्त शंख रहता है, वहां सदैव सुख-समृद्धि बनी रहती है। आमतौर पर लोग जिस शंख का प्रयोग करते हैं, वह वामावर्त्त शंख है और यह बहुलता के साथ पाया जाता है।

सामान्यतः शंख अक्सर श्वेत रंग का होता है, परन्तु शंखिनी नामक मादा शंख श्याम रंग का पाया जाता है। इसकी सतह खुरदरी सी होती है।

आयुर्वेदिक दृष्टि से भी शंख काफी महत्वपूर्ण है। इसको जल के साथ घिसकर आंखों में लगाने से समस्त प्रकार के नेत्र विकार दूर होते हैं और चेहरे पर लगाने से मुंहासे दूर हो जाते हैं।

शंखभस्म उचित मात्रा में सेवन करने से शूल, पित्त, कफ जैसे विकार नष्ट हो जाते हैं।

आयुर्वेद में रातभर शंख में रखे जल का नित्य सेवन करना बेहद लाभकारी माना गया है।

किंवदन्ती है कि जितनी दूर तक शंख की ध्वनि पहुंचती है, उतनी दूर तक के समस्त रोगाणुओं का नाश हो जाता है। हर मांगलिक अवसर पर शंख वादन करना इस बात को और भी पुष्ट करता है।

इतना कुछ होने के बावजूद शंख का असली या शुद्ध होना जरूरी है। इसकी शुद्धता की पहचान निम्न रूपेण की जा सकती है।

असली शंख की चमक सदैव एक समान बनी रहती है, जबकि नकली शंख की चमक कुछ ही दिनों बाद फीकी पड़ने लगती है। नकली शंख को खारे, क्षार युक्त जल में रखने से भी फीका पड़ जाता है, जबकि असली शंख के साथ ऐसी बात नहीं होती।

असली शंख की पहचान यह भी है कि इसके छिद्र को कान के पास लाने पर उसमें समुद्री लहरों जैसी ध्वनियां सुनाई पड़ती है।

कहा जाता है कि असली शंख में पानी भरकर छिद्र को नीचे की ओर भी कर दिया जाय, तो पानी नहीं गिरता।

एक मान्यतानुसार बच्चों के गले में छोटे-छोटे शंखों की माला पहनाने से उन्हें कोई बुरी नजर नहीं लगती और बच्चे शीघ्र बोलने लगते हैं।

साहित्य में तो शंख से संबंधित एक लोकोक्ति है। प्रचलित है कि ''शंख बाजे, बलाय भागे।''

खैर वास्तविकता जो कुछ भी हो किन्तु शंख हमारे लिए लाभकारी है। आध्यात्मिक महत्व के साथ शंख का औषधीय महत्व भी कम नहीं है।

> धर्मग्रंथानुसार शंख को पूजा करते समय अनिवार्य रूप से बजाने का प्रचलन है। कहा जाता है कि इसकी ध्वनि सुनकर देवगण बेहद प्रसन्न होते हैं।

हमारे संरक्षक

'समृद्ध सुखी परिवार' मासिक पत्रिका के नियोजित प्रकाशन के लिए 11,000/– रुपये की राशि प्रदत्त करने वाले संरक्षक सदस्य होंगे जिन्हें पत्रिका आजीवन निःशुल्क प्रेषित की जायेगी और पत्रिका में उनका नाम प्रकाशित किया जाएगा। हमारे प्रथम संरक्षक सदस्य हैं–

श्री जयंतीलाल वालचंद खींचा

निवासी घानेराव, प्रवासी अंधेरी वेस्ट मुम्बई

मंत्र-महत्ता

डॉ. रामसिंह यादव

अच्छे स्वास्थ्य हेतु लाभदायक है श्री गायत्री मंत्र

ऊँ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं,
भर्गो देवस्य धीमहि धियों योनः प्रचोदयात्।

आत्मोकर्ष के उद्देश्य से की जाने वाली साधनाओं में श्री गायत्री साधना का विशिष्ट स्थान है। गायत्री साधना से आध्यात्मिक प्रगति के साथ-साथ सांसारिक उपलब्धियों के सहज में प्राप्ति होने का उल्लेख गायत्री विषयक ग्रंथों में मिलता है। बताया गया है कि मानवीय शक्तियां तथा प्रतिभाओं को उजागर करने की अद्भूत क्षमता गायत्री मंत्र में विद्यमान है। गायत्री की अनेकानेक विशेषताओं के कारण गायत्री मंत्र को महामंत्र, गायत्री को भूलोक की 'कामधेनु', 'कल्पवृक्ष' आदि की संज्ञा दी गयी है। प्राचीन ऋषि-मुनियों संतों तथा अर्वाचीन गणमान्य विद्वानों का कथन है कि गायत्री मंत्र सद्बुद्धिदायक है। इसके निरंतर जप से साधक को मेघा ऋतुम्भरा बुद्धि ज्ञान की प्राप्ति होती है। नीतिकारों ने मनुष्य के लिए सद्बुद्धि को सर्वोत्तम धन प्रतिपादित किया है। रामचरित्र मानस के रचयिता गोस्वामी तुलसीदासजी के अनुसार-

जहां सुमति वहां संपत्ति नाना।
जहां कुमति वहां विपत्ति निधाना॥

नियमित तथा विधि विधान सहित गायत्री मंत्र जप अथवा प्रकारांतर गायत्री साधना करने से साधक का मनोमस्तिष्क उत्तम विचारों से झनझनाने लगता है तथा साधना का परिपक्व होते-होते साधक का संपूर्ण व्यक्तित्व देवी प्रतिभा से जगमगा उठता है।

भगवान मनु ने गायत्री उपासना को राष्ट्रीय उपासना का स्थान प्रदान किया। मनुस्मृति में इस महान तत्व ज्ञान और उपासना की पग-पग पर महत्ता प्रतिपादित की गयी है। यथा देखिए

जप्येनैव तु संधिध्येद् ब्राह्मणों नात्र संशयः।
कुर्योदन्यन्न वा कुर्यान्मैत्रों ब्राह्मण उच्चयते॥

(मनु. 2/87)

अर्थात् गायत्री उपासना समस्त सिद्धियों की आधारभूत है, गायत्री उपासक अन्य कोई अनुष्ठान न करें तो भी सबसे मित्रवत् आचरण करता हुआ ब्रह्मा को प्राप्त करता है, क्योंकि जप से उसका चित्त बाह्य चेतना की तरह शुद्ध व पवित्र हो जाता है। गायत्री सद्बुद्धि-ज्ञान की देवी है। वह हमें माया के जाल से निकालकर हमारा परम कर्तव्य क्या है, हम स्वस्थ, सुखी व प्रसन्न कैसे रह सकते हैं हमें बताती है।

स्वास्थ्य हेतु लाभदायक

सृष्टा की सर्वोत्तम कृति मानव जीवन है। इस छोटी-सी काया में बीजरूप से यह सब कुछ समाहित कर दिया गया है जो कि इस सृष्टि में सन्निहित है। समस्त ग्रह-गोलकों, नक्षत्रों, विविध लोक-लोकांतरों, भुवनों आदि से लेकर स्वयं ईश्वरीय चेतना में सन्निहित समस्त दिव्य शक्तियां अपनी इसी काया में सिमटी पड़ी है। मनुष्य जीवन को स्वस्थ बनाए रखने के लिए गायत्री मंत्र लाभदायक है।

गायत्री मंत्र की महत्ता

वैज्ञानिक शोधों ने प्रतिपादित कर दिया है कि गायत्री मंत्र 'ऊँ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं, भर्गो देवस्य धीमहि धियो योनः प्रचोदयात्।'' के जाप से इन्डोक्राइन ग्लैड्स के इसका निकलना संतुलित होता है। इसके स्रावित हार्मोन से शरीर के क्रियाकलाप चलते हैं। त्वचा की बाह्य रोधी क्षमता बढ़ती है। हृदय की गति प्रति पांच मिनट कम होती है।

गायत्री मंत्र में जिन ध्वनियों का चयन हुआ है उनके उच्चारण से अंदर ही अंदर एक घर्षण पैदा होता है, जो शक्ति स्रोतों का भंडार खोल देता है। ध्वनि तरंगें जहां भी टकराती है वहीं नई हलचल पैदा कर देती है।

गायत्री जप से बुद्धि विकसित होती है। मनुष्य तनावमुक्त हो जाता है। उसके चेहरे पर आभा आती है। जप के साथ-साथ सविता सूर्य की सूक्ष्म सत्ता का ध्यान भी किया जाता है। गायत्री मंत्र प्राणों की रक्षा भी करता है। आत्मबल बढ़ाता है। व्यक्ति को परस्पर प्रेम, स्नेह, सौहार्द के साथ रहना जीना व्यवहार सिखाता है।

महर्षि दयानंद सरस्वती गायत्री मंत्र के प्रखर उपासक थे। उनका मत है कि गायत्री मंत्र संसार सागर में तरने की नाव और आत्मप्राप्ति की सड़क है। आयुर्वेद के प्रसिद्ध ग्रंथ 'माधव निदान' के प्रणेता माधवाचार्यजी भगवती गायत्री के परम भक्त थे। भगवती गायत्री कृपा से ही उनको इस ग्रंथ की रचना करने की प्रेरणा मिली थी। पंडित मदन मोहन मालवीय के अनुसार ऋषियों ने जो अमूल्य रत्न हमें दिये हैं उनमें से एक अनुपम रत्न गायत्री मंत्र है। गायत्री मंत्र से हम स्वस्थ, भले-चंगे स्फूर्त सदा रहते हैं। हमारी बुद्धि पवित्र होती है, ईश्वर का प्रकाश आत्मा में आ जाता है। हिन्दी साहित्य के प्रसिद्ध साहित्य मनीषी पंडित बालकृष्ण भट्ट नित्य पांच सौ गायत्री मंत्र जपते थे। उनका कहना था कि श्री गायत्री मंत्र जप करने वालों को कभी कोई कमी अभाव नहीं रहता है।

गायत्री मंत्र को संकट निवारण की रामबाण औषधि कहा गया है। दैनन्दिनी उपासना के अंतर्गत एकाग्रचित्त व शांत मन से नित्य तीन माला न्यूनतम मंत्र जप करना लाभप्रद रहता है। बालक-बालिका गायत्री उपासना के रूप में गायत्री चालीसा का पठन आसानी से कर सकते हैं। गायत्री चालीसा की ये पंक्तियां हृदयंगम करने योग्य है। जिनसे तन-मन, स्वस्थ व सदा युवा बना रहता है उसकी आशाएं उमंगे कभी धूमिल नहीं पड़ने पाती। आंखों में चमक, चेहरे पर तेज, ओठों पर मुस्कान कभी घटती नहीं है। यही स्वास्थ्य जीवन या चिर यौवन है-

महामंत्र जितने जग माही। कोउ गायत्री सम नाही॥

-14, उर्दूपुरा, उज्जैन (म.प्र.)

सूर्य-पूजा का एक रूप
सी दोनाई

शुभदा पांडेय

भारत ही नहीं संपूर्ण विश्व सूर्य को शक्ति, ऊर्जा और प्रकाश का स्रोत मानकर विविध रूपो में उसकी पूजा करते आ रहा है। भारत के ऋषि-मुनियों ने अपने शोध व अनुसंधानों से सूर्य को मानव जीवन से ऐसा एकाकार किया कि ब्रह्म बेला से लेकर सांध्य बेला तक वह सूर्य सहचर बन कर जीता रहता है। देश के अलग-अलग प्रांतों में सूर्य-पूजा कि कुछ अलग-अलग परम्पराएं है एवं लोक रीतियां हैं।

उगते सूर्य के देश के नाम से प्रसिद्ध उत्तर पूर्वी क्षेत्र के किनारे बसा अरुणाचल प्रदेश अपनी जनजातीय संस्कृति के लिए प्रसिद्ध है। ये जनजातियां प्रकृति का पर्याय है और अपने विविध सांस्कृतिक ताने-बाने के रूप में प्रेम, उत्साह और उत्सवी रूप में एक है। वर्ष में अनेक बार अलग-अलग मौसमों, त्योहारों में ये अपने अनुभूति को अभिव्यक्ति देते हैं। इनकी एक प्रमुख जनजाति है 'टागिन' ये साहसी, स्वाभिमानी और स्वतंत्रता प्रिय होते हैं।

टागिन जनजाति का मुख्य त्यौहार 'सी दोनाई' है। ये अन्य अरुणाचली जनजातियों की तरह प्रकृति पूजक है। सृष्टि की उत्पत्ति और पालन में दो शक्तियों की प्रमुख भूमिका मानते हैं। 'सी' यानी पृथ्वी और 'दोनाई' याने सूर्य। यह त्यौहार प्रतिवर्ष 5 से 8 जनवरी तक मनाया जाता है। इस त्यौहार में सभी इकट्ठा होकर, उत्सव का आनंद लेने और संपूर्ण समाज के कल्याण के लिए प्रार्थना करते हैं। प्रकृति की पूजा इस समाज के धार्मिक आस्था का मूल आधार है। इसमें कई प्रकार की प्रार्थनाएं एवं अनुष्ठान किये जाते हैं। दुष्ट आत्माओं से बचने के लिए बलि चढ़ाने की प्रथा है। इसमें गाये जाने वाले लोकगीत एवं प्रार्थनाएं मौखिक रूप में पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरित होती रहती है।

टागिन समाज में ऐसा विश्वास है कि मनुष्य तथा इस विश्व एवं पाताल लोक तथा अन्य अदृश्य शक्तियों द्वारा जीवन के नाटक का निर्धारण तथा नियंत्रण (सी-पृथ्वी) के आत्मिक रूप तथा (दोनाई-सूर्य) जो आध्यात्मिक शक्ति की परम शक्ति है, के हाथों ही होता है। यह त्यौहार जीवित रहने की खुशी को व्यक्त करता है, जिसमें ये लोग मानवजाति के कल्याण की कामना करते हैं।

इसके लिए पुजारी, जो गीत, भजन आनुष्ठानिक क्रिया के दरम्यान गाता है, वह एक प्रकार का 'सी दोनाई' को भेजा प्रार्थना-संदेश है कि वह सभी दुष्ट आत्माओं को निष्क्रिय बना दे, ताकि मनुष्य उसके विनाशकारी प्रभाव से अप्रभावित रहे।

धार्मिक पाठ, गीत, नृत्य के रूप में इस उत्सव के विविध क्रियाकलापों, वस्तुत: जीवन के आरंभ तथा उसके अनुसरण में इस जनजाति के विश्वास की अभिव्यक्ति है। सूर्य के देश से, सूर्य की यह पुष्पांजलि प्रणम्य है।

–असम विश्वविद्यालय, सिलचर (असम)

संपन्नता में है सुख ?

डॉ. हीरालाल छाजेड़ जैन

मानव की असीम महत्वाकांक्षाओं ने उसके लिए जितनी सुविधा, संपन्नता व विकास के रूप में प्रगति के द्वार खोले हैं, उतने ही अनुपात में खुशियां भी छीनी है। समाज में अनेक वर्ग के लोगों के साथ संपर्क होता है- डॉक्टर, वकील, व्यावसायिक वर्ग परन्तु संपन्नता उन्हें संतुष्टि एवं सुख नहीं दे पायी।

जनकवि तुलसीदासजी ने ठीक ही लिखा है कि 'नहीं दरिद्र सम दुख जग माही' तो फिर आखिर सुख कहां है? क्या सुख संपन्नता में है? लेकिन ऐसा भी नहीं है। फिर उन्होंने कहा कि 'संत मिलन अस सुख जग नाही।' अर्थात संसार में दरिद्रता से बढ़कर कोई दुख नहीं है और जो सुख संतों, सज्जनों, अच्छे व्यक्तित्व वाले लोगों से मिलने से प्राप्त होता है उस जैसा आनंद संपन्नता में नहीं आता। संपन्नता उन्हें असीम आनंद व सुख नहीं प्रदान करती बल्कि उन्हें आत्मग्लानि की और धकेल देती है। अंतत: मनुष्य को भौतिकता एवं आध्यात्मिकता में समन्वय करना ही पड़ेगा। सम्भ्रांत व्यक्तियों के वैवाहिक समारोह में जिस प्रकार धन का औचित्यहीन अपव्यय होता है, उससे कितने गरीब घरों के चूल्हे जलते तो धन की सामाजिक सार्थकता निश्चित होती।

सारी व्यवस्था उपभोक्तावाद में ग्रसित है, चारों तरफ व्याप्त भ्रष्टाचार ने पैर फैला रखे हैं। राजनेताओं में नैतिकता में आई गिरावट इसका प्रमुख कारण है। आज कानून उन तक पहुंच नहीं पाता जो कानून तोड़ते हैं। सारे सबूतों को पैसे के बल पर मिटा दिया जाता है। हिन्दुस्तान के नीति निर्धारक लोग देश को दो रूपों में देखते हैं- एक तरफ सुविधा संपन्न तो दूसरी ओर गरीबी और बेकारी की मार झेल रहे निर्धन लोग जो अपने जीवन की जवानी को पहचान ही नहीं पाते और सीधे बुढ़ापे में प्रवेश कर जाते हैं क्योंकि बचपन से जीवन गाड़ी खींचते दो वक्त का निवाला जुटाते-जुटाते या तो किसी गंभीर बीमारी से ग्रस्त हो जाते हैं या असमय काल के गाल में समा जाते हैं।

संपन्नता की अंधी दौड़ में हमारे प्रजातांत्रिक देश में शासन प्रशासन में व्याप्त भ्रष्टाचार से सुप्रीमकोर्ट भी निराश है जैसाकि माननीय न्यायमूर्ति की टिप्पणी से झलक रहा है कि भ्रष्टाचार कभी खत्म नहीं हो सकता। आज सत्ता और आमजन दक्षिणी और उत्तरी ध्रुव हो गये हैं। फिर भी आम आदमी आशावान होता है क्योंकि भारतीय संस्कृति में निराशा के लिए जगह नहीं है। वह आशाभरी दृष्टि से टकटकी लगाये देख रहा है कि शायद किन्हीं योजनाओं का लाभ मिल जाए लेकिन आशा भरी निगाहों में आंसू के सिवाय कुछ भी प्राप्त नहीं हो पाता है। तुलसीदासजी की फिर वही पंक्तियां याद आती है ''नहीं दरिद्र सम दुख जरा माही, संत मिलन अस सुख जग नाही।''

–जय श्री टी. कंपनी, नन्दी शाही
कटक-753001 (उड़ीसा)

सपने यों ही नहीं आते

अरस्तू, महान दर्शनिक

एक मनोवैज्ञानिक तथ्य है स्वप्न, जिसे उसके शारीरिक आधार पर समझने की जरूरत है। हमें सपनों के विषय की खोज करनी चाहिए और उससे भी यह जांच करनी चाहिए कि हमारी आत्मा की कौन सी शाखा इसे प्रस्तुत करती है। सपनों की उत्पत्ति का काम हमारी सोच का है या बोध का?

यह न तो हमारे विचार का परिणाम है और न ही पूरी तरह बोध का। सपने देखना हमारा विचार क्षमता का अंश नहीं है और यह सीधे-सीधे बोध से भी नहीं जुड़ा है। हालांकि स्वप्न बोध का अंश है क्योंकि यह हमारे अंदर उपलब्ध ऐसे प्रभाग का हिस्सा है, जो ज्ञान अर्जित करता है, लेकिन सपनों का संबंध बोध की कल्पना शक्ति से है। विचार को स्वप्न की उत्पत्ति का साधन न मानने के पीछे मुख्य कारण नींद के दौरान विचार क्षमता का कमजोर पड़ जाना है। मेरे हिसाब से ऐसी स्थिति में विचार को सपनों के निर्धारण का आधार मानना उपयुक्त नहीं होगा। स्वप्न कल्पना क्षमता की स्थिति है, जो प्रभाव-बोध यानी ज्ञान प्रभाव के कारण जन्म लेती है। सपनों पर बहुत गहराई से ध्यान देना चाहिए क्योंकि ये अन्यथा नहीं होते। जो भी स्वप्न हम देखते हैं उसका कोई न कोई कारण अवश्य होता है। कभी-कभी यह कल्पनाएं भविष्य में घटने वाली घटनाओं का पूर्व संकेत होती हैं और कभी संयोग। स्वप्न व्यक्ति द्वारा किसी काम को करने की इच्छा का भी संकेत हो सकते हैं। सपनों की उत्पत्ति में इन मान्यताओं का उपयोग करना सपने देखने वालों के साथ ही उन लोगों के लिए भी उपयुक्त होगा, जो इसके सैद्धांतिक पक्ष का अध्ययन करना चाहते हैं।

स्वप्न के दौरान हम जो गतिविधियां करते हैं, उनका कारण दिन में संपादित व असंपादित कार्य हो सकते हैं। इसका अर्थ यह है कि जो कुछ भी हम दिन में करते हैं या करना चाहते हैं, वही काम और दबी हुई इच्छाएं रात में कल्पनाओं के रूप में स्वप्न बनकर हमारा मार्ग प्रशस्त करती हैं। दूसरे शब्दों में कहें तो किया गया काम और नहीं किए गए कार्यों का अंश स्वप्न की उत्पत्ति का माध्यम बनता है। स्वप्न ईश्वर द्वारा किया गया संवाद नहीं है। स्वप्न का कोई अलौकिक औचित्य भी नहीं है। जरूरी नहीं कि यह किसी खास व्यक्ति को ही आए। स्वप्न तो एक मानसिक स्थिति है जिसकी अनुभूति कोई भी कर सकता है। सपने की प्रकृति और पद्धति (जिसमें सपनों की उत्पत्ति होती है), हमारी नींद की वैज्ञानिक प्रक्रिया का क्रमबद्ध विकास है, इसलिए सपनों को समझने के लिए दैवीय सिद्धांत और पूर्व धारणाओं को छोड़ वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाना ही सर्वश्रेष्ठ होगा।

कभी-कभी स्वप्न में की गई अनुभूति सच हो जाती है। वहीं हमारे द्वारा देखे गए बहुत से सपने कई बार पूरे नहीं होते तो यह आश्चर्य की बात नहीं। सपनों का पूरा होना या नहीं होना आकस्मिक होता है। इसका अध्यात्म से कोई लेना-देना नहीं। सपनों के सच होने का पूर्वानुमान लगाने में एक सिद्धांत उपयोगी साबित हो सकता है। जो स्वप्न की सटीक व्याख्या करता है और जिसमें हमें भविष्य में होने वाली घटनाओं का आभास पूर्व में हो जाता है। यह स्थिति बोध के कारण उत्पन्न होती है, जो कल्पना के रूप में किसी वस्तु या अभिलाषा से जुड़ जाती है। सपनों की वैज्ञानिक प्रक्रिया इस बात की संभावना व्यक्त करती है कि किसी चीज या वस्तु के प्रति की गई चेष्टा का प्रभाव बोध द्वारा सपना देखने वाले की आत्मा तक पहुंच जाए और नींद के दौरान वह चित्रों और पदार्थ के रूप में स्वयं को प्रदर्शित करे। इसकी संभावना इसलिए भी बहुत अधिक है क्योंकि नींद में व्यक्ति अत्यंत छोटी इच्छाओं के प्रति भी बहुत संवेदनशील होता है।

विपत्तियों की जड़ है अज्ञान

स्वामी दयानंद सरस्वती

तीन चीजें शाश्वत हैं। ईश्वर, ब्रह्मांड का भौतिक उद्देश्य और आत्मा। ईश्वर और आत्मा के शाश्वत होने से उनकी बराबरी नहीं की जा सकती। ईश्वर अनंत और सर्वज्ञ है जबकि आत्मा और उसके ज्ञान की सीमा है।

अज्ञान सभी विपत्तियों की जड़ है। अशुद्ध चीजों को शुद्ध मानना, दुख देने वाली चीजों को सुख लाने वाली समझना और नश्वर चीजों को अनश्वर मानना ही अज्ञान है। अज्ञान की समाप्ति पर ही उद्धार संभव है। जितने समय तक अज्ञान रहेगा तब तक उद्धार नहीं होगा। मान लीजिए एक चिकित्सक और एक अज्ञानी व्यक्ति को बुखार आता है। चिकित्सक को अपने ज्ञान से समझ आ जाएगा कि बीमारी का कारण क्या है? लेकिन अज्ञानी व्यक्ति सही कारण का पता नहीं लगा पाएगा। पीड़ा तो दोनों को होगी, लेकिन अज्ञानी व्यक्ति इस तरह के कयास लगाएगा कि उसके असंयम या असावधानी या किसी और वजह से उसे बुखार हुआ है। आज जो कुछ भी पीड़ा वह भुगत रहा है वह आने वाले सुख का संकेत होगी। वह अपने आप से कहता है, यदि मैं कुछ भी आपत्तिजनक करूंगा तो उसका परिणाम दुख ही होगा। अज्ञान उसे सही कारण समझाने में असफल रहेगा। ज्ञान की परिभाषा एकदम अलग है। सही मायनों में दुख को दुख और सुख को सुख समझना ही विद्या या ज्ञान है, जिससे चीजों की वास्तविक प्रकृति का पता लगाने के बजाय चीजों की गलत धारणा बने वह अज्ञान कहलाता है। बिना ज्ञान के ईश्वर को नहीं पाया जा सकता। मात्र धार्मिक जीवन और चिंतन से ही ईश्वर की प्राप्ति नहीं होती। वह शारीरिक और मानसिक प्रक्रिया है, ज्ञान नहीं है। अच्छे कर्म, ईश्वर की पहचान और सही ज्ञान मोक्ष का मार्ग दिखाते हैं जबकि नश्वर जीवन, मूर्ति पूजा और झूठा ज्ञान आत्मा के बंधन का कारण हैं। अच्छे कर्म को ग्रहण करना जैसे बातों में सच्चाई और बुरे कर्मों जैसे झूठ बोलना त्याग देना ही मोक्ष के द्वार हैं।

मनुष्य का जीवन सुख और दुःख से सदा ग्रस्त रहता है, क्योंकि शरीर सहित जीव की सांसारिक प्रसन्नता की निवृत्ति होती ही है और जो शरीर रहित मुक्त जीवात्मा ब्रह्म में रहता है उसको सांसारिक सुख-दुःख का स्पर्श भी नहीं होता और सदा आनंद में रहता है। जो कोई दुख से छूटना और सुख को प्राप्त होना चाहता है उसे अधर्म को छोड़ धर्म आचरण करना चाहिए। जो व्यक्ति सत्य का साथ देता है वह स्थिर रूप से मूल्यों के साथ प्रगति करता है। जब उसके मूल्य उसके यश और प्रतिष्ठा को बढ़ा देते हैं तो वह शक्ति और महानता का अचूक स्रोत बन जाता है।

सत्यनारायण भटनागर

जीवन का सौंदर्य-दर्शन है सुंदरकांड

वाल्मीकीय रामायण और और संत तुलसीदासजी लिखित रामचरित मानस का भारतीय जनमानस में ही नहीं, विदेशों में भी बहुत प्रभाव है। भारतीय लोक जीवन में रामायण के नायक भगवान श्रीराम मर्यादा पुरुषोत्तम का जितना प्रभाव है, उतना अन्य किसी का नहीं, ये परिवार, समाज, राज्य सभी के लिए एक आदर्श पुरुष हैं। हमारे राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने भगवान श्रीराम के नाम के लिए लिखा है, '' क्यांकि पवित्र बनने के लिए भी राम-नाम लेना लाभकारी है, जो आदमी दिल से राम-नाम लेता है, वह आसानी से अपने आप पर काबू रख सकता है और अनुशासन में रह सकता है।'' महात्मा श्री मदन मोहन मालवीय ने लिखा है ''रामायण में हिन्दू-गृहस्थ जीवन का आदर्श बताया गया है।''

रामायण के इस प्रभाव के कारण उत्तर भारत में रामायण के अखंड पाठ करने का प्रचलन निरंतर चल रहा है। एक दिन-रात में रामायण का संपूर्ण पाठ किया जाकर भक्ति भावना से पूजन अर्चन किया जाता है। मालवा व राजस्थान के ग्रामीण क्षेत्र में सुंदरकांड का पाठ करने का प्रचलन आज भी है।

रामायण में बाल काण्ड से लेकर उत्तरकाण्ड तक मर्यादा पुरुषोत्तम राम के जीवन चरित्र का वर्णन है, राम के जन्म, विवाह और रावण विजय जैसे प्रसंग है- बड़ा मधुर वर्णन किया गया है किन्तु इन काण्डों का नाम सुंदरकाण्ड नहीं रखा गया है, सुंदरकाण्ड में महावीर बजरंग द्वारा समुद्र लांघ कर माता सीता की लंका में खोज करने का वर्णन किया गया है, किन्तु इस सुंदरकाण्ड के नायक है महावीर बजरंग। इसमें भगवान श्रीराम के चरित्र का वर्णन नहीं है। फिर यह काण्ड सुंदरकाण्ड के नाम से क्यों प्रसिद्ध किया गया, इसी काण्ड का नाम सुंदरकाण्ड क्यों दिया गया। यह एक प्रश्न है जिस पर विचार करना चाहिए।

सुंदरकाण्ड में महावीर हनुमान माता सीता की खोज के लिए लंका जा रहे है। इसमें विशेष बात यह है कि हनुमानजी को अपनी क्षमताओं का पता नहीं था। ऐसा कहा जाता है कि हनुमानजी को जब कोई अपनी शक्ति का स्मरण कराता है तब उनकी शक्ति मजबूत होती है और वे दृढ़ निश्चय, मनोबल और उत्साह के साथ प्रबल वेग से महासागर को पारकर लंकापुरी की सुदृढ़ रक्षा व्यवस्था को भंग कर माता सीता को खोज कर और अपनी शक्ति का रामदूत के रूप में प्रदर्शन कर वापस भगवान श्रीराम के पास लक्ष्य को प्राप्त कर वापस आ जाते हैं।

यही रहस्य है सुंदरकाण्ड नाम होने का है। आदमी की क्षमताएं अनेक हैं। वह बहुत बड़ी संभावनाओं का पुंज है किन्तु उसे अपनी शक्तियों का भान नहीं होता। जब उसे अपनी शक्ति का ज्ञान होता है, तब वह अंदर की शक्ति से उमंग, उत्साह का पुतला बन जाता है, सफलता उसके चरण चूमने का इंतजार करती है।

महात्मा वाल्मीकीजी सुंदरकाण्ड के प्रारंभ में ही लिखते है ''कपिवर हनुमानजी ऐसा कर्म करना चाहते थे जो दूसरों के लिए दुष्कर था तथा उस कार्य में उन्हें किसी और की सहायता भी प्राप्त नहीं थी'' जब कार्य अत्यंत दुष्कर हो और कोई सहायता कहीं से न मिले तब सहज स्वाभाविक तो यह है कि हम निराश और हताश हों किन्तु इस प्रसंग में बताया गया है कि इन परिस्थितियों में भी निराश न हो, आगे बढ़कर सफलता कैसे अर्जित की जा सकती है। इस तथ्य को हमें स्मरण रखना होगा कि हनुमानजी की तरह किसी को भी इन परिस्थितियों में अपनी शक्ति का भान कराकर उत्साहित करने के लिए जामवंत जैसी प्रेरक शक्ति का होना आवश्यक है।

हनुमानजी माता सीता की खोज में चल पड़ते हैं। ईश्वरीय शक्तियां उनके साथ है। तब मैनाक पर्वत उनसे प्रार्थना करता है ''अपनी थकान उतारिए, हमारी पूजा ग्रहण कीजिए और मेरे प्रेम को अंगीकार कीजिए'' इसके उत्तर में हनुमानजी का उत्तर सफलता की कुंजी के लिए एक सिद्धांत बन कर उभरता है। वे कहते हैं ''मेरे कार्य का समय मुझे जल्द करने के लिए प्रेरित कर रहा है, यह दिन भी बीता जा रहा है, मैंने वानरों के समीप यह भी प्रतिज्ञा ली है कि मैं यहां बीच में कहीं नहीं ठहर सकता।'' महात्मा तुलसीदासजी ने इस बात को इस प्रकार कहा है, 'राम काजु कीन्हे बिनु मोहि कहां विश्राम।''

इससे यह सीख मिलती है कि यदि किसी कार्य में जो दुष्कर है और कोई सहयोगी है नहीं तो हमें जरूर धैर्यवान रहकर आगे की ओर निरन्तर कदम बढ़ाना ही होगा, कठिनाइयां, निराशा, हताशा भी मिलेगी, आत्महत्या के विचार भी आ सकते हैं, इन सबसे उबरने के लिए सुंदरकाण्ड जीवन का सौंदर्य दर्शन है।

रावण के हाथों अपहरण के बाद माता सीता के दर्द, शोक, कष्ट, तनाव का यदि अध्ययन करें तो लगता है कि रावण जैसे राक्षस के चंगुल में फंसकर निकलना कितना असंभव कार्य है किन्तु माता सीता का आत्मविश्वास, दृढ़ इच्छाशक्ति, पवित्र नैतिक साहस और चरित्र ही रावण से सीताजी को बचा पाया, यह भी एक तपस्या है।

रावण हर काल में रहा है और रहेगा, उसका शक्तिशाली, समृद्ध होना, अहंकारी होना भी तय है और इसलिए उसकी ताकत से टकराने और सफल होने के लिए सुंदरकाण्ड का प्रेरक संदेश सदा आवश्यक रहेगा, इसलिए सब काण्डों के रहते हुए केवल इस काण्ड का नाम सुंदरकाण्ड रखा गया, रामायण के हर काण्ड में प्रेरक संदेश है किन्तु इस काण्ड में प्रत्येक सफलता के चरण को एक के बाद एक अंकित किया गया है। आज प्रबंध शास्त्र के नाम से जो पुस्तकें बाजार में उपलब्ध है उनमें यही सिद्धांत, केवल यही सिद्धांत प्रतिपादित हुए हैं। आवश्यकता है कि हम सुंदरकाण्ड का गंभीरता से अध्ययन मनन करें।

-2, एम.आई.जी. देवरा देवनारायण नगर
रतलाम (म.प्र.)

शास्त्र-विज्ञान

शशिभूषण शलभ

रोगनाशक है यज्ञ का धुआं

आधुनिक परिवेश में उच्च शिक्षित व पाश्चात्य सभ्यता में विश्वास करने वाले स्त्री-पुरुष यज्ञ की वास्तविकता को नहीं समझने के कारण यज्ञ व हवन करने को आडम्बर मानते हैं। लेकिन वैज्ञानिक यज्ञ का वैज्ञानिक महत्व बताते हैं।

यज्ञ के धुएं से वातावरण में फैले जीवाणु नष्ट होते हैं और उन जीवाणुओं के नष्ट होने पर स्त्री-पुरुष, किशोर व प्रौढ़ व्यक्ति रोग-विकारों से सुरक्षित होते हैं। यज्ञ के धुएं में एक विशेष तरह की गंध होती है। डेंगू और मलेरिया के मच्छरों से भी सुरक्षा होती है। यज्ञ के धुएं से वातावरण सुगंधित रहता है। यज्ञ में चंदन आदि का धुआं त्वचा रोगों से भी सुरक्षा करता है।

आयुर्वेदाचार्यों के अनुसार किसी रोग को नष्ट करने के लिए जो औषधि सेवन करते हैं कि उदर की पाचन क्रिया रक्त में उन्हीं तत्वों को सम्मिलित होने देती है जो शरीर की संरचना के साथ मिल जाती है। इस प्रक्रिया में औषधि का जो भाग बच जाता है वह मल-मूत्र द्वारा बाहर निकल जाता है। इस वैज्ञानिक पद्धति को देखते हुए औषधियों से विषाणुओं को नष्ट करने के तरीके में अनेक कठिनाई आती है।

यज्ञ द्वारा इन कठिनाइयों को दूर किया जा सकता है। यज्ञों द्वारा रोगों की चिकित्सा को बहुत सरल बनाया जा सकता है। यज्ञों द्वारा मारक एवं पोषक दोनों तत्वों को सरलता से शरीर में पहुंचा सकते हैं। आत्मिक और मानसिक स्वास्थ्य को सुरक्षित रखने में सहायता मिलती है।

आधुनिक वैज्ञनिकों ने यज्ञों पर परीक्षण करके ज्ञात किया है कि यज्ञ के धुएं का मस्तिष्क पर सीधा प्रभाव होता है। धुएं के वातावरण से मस्तिष्क की कार्यक्षमता विकसित होती है। अमेरिका के मनोवैज्ञानिक के अनुसार स्मरणशक्ति पर यज्ञ के धुएं के सुगंधित वातावरण से विशेष प्रभाव पड़ता है। इस सुगंधित वातावरण में खोई हुई स्मरणशक्ति वापस आती है। यज्ञ व हवन के धुएं में ऐसी सुगंध उत्पन्न होती है जो रक्त में एडीनलीन की मात्रा में वृद्धि करती है।

यज्ञ व हवन सामग्री में सम्मिलित केशर, अगर, चंदन, जायफल आदि के सुगंधित धुएं से मस्तिष्क को शांति मिलती है। यही नहीं यज्ञ के वातावरण में रहने से यौन क्षमता भी विकसित होती है।

एक अन्य मनोवैज्ञानिकों के अनुसार जिस परिवार में लड़ाई-झगड़े अधिक दिखाई देते हैं वहां पर हवन करने से वातावरण बहुत शांत होता है। लोगों के मस्तिष्क से लड़ाई-झगड़े के विकृत विचार नष्ट हो जाते हैं। हवन का सुगंधित धुआं लोगों के मस्तिष्क पर अच्छा प्रभाव डालता है।

> **"आधुनिक वैज्ञानिकों ने यज्ञों पर परीक्षण करके ज्ञात किया है कि यज्ञ के धुएं का मस्तिष्क पर सीधा प्रभाव होता है। धुएं के वातावरण से मस्तिष्क की कार्यक्षमता विकसित होती है।"**

आयुर्वेद चिकित्सा के विशेषज्ञों के अनुसार रोगों को उत्पन्न करने वाले विषाणु (वायरस) वायु में फैले रहते हैं और श्वास द्वारा शरीर में पहुंच कर रोग उत्पन्न करते हैं। वायु में फैले विषाणुओं से संक्रामक रोगों की उत्पत्ति होती है। ऐसे रोगों के विषाणु यज्ञ के धुएं से नष्ट होते हैं। यज्ञ में इस्तेमाल की जानेवाली वनौषधियां के धुएं में मनुष्य की इंद्रियां, स्वर और मन प्रसन्न रहता है। यज्ञ के धुएं के वातावरण में रहने से बालों का टूटना बंद हो जाता है। दांत मजबूत बने रहते हैं, चेहरे पर प्रसन्नता बनी रहती है। मौलसरी, खैर, पलाश आदि सामग्री के यज्ञ कुण्ड में जलने से उत्पन्न धुआं अनेक रोगों को नष्ट करता है।

यज्ञ व हवन में जलने वाली सामग्री में जब मेहंदी की लकड़ी को जलाया जाता है तो उससे उत्पन्न धुएं से मक्खी, मच्छरों के साथ मकड़ी, छिपकली, काकरोच आदि कीड़े-मकोड़े भी पलायन करते हैं। गज पीपल वनौषधि के जलने से वातरोग, असगंध के धुएं से उन्माद रोग (पागलपन), कालमेघ के धुएं से शीघ्रपतन की विकृति से सुरक्षा होती है।

यज्ञ करने से प्राकृतिक रूप से रोगों की विषाणुओं से सुरक्षा होती है। आधुनिक परिवेश में सड़कों के पास रहने वाले लोग वाहनों के धुएं से श्वास रोग अस्थमा (क्षमा), हृदय रोग, क्षय रोग (टी.बी.) से अधिक पीड़ित रहते हैं। इसके विपरीत यज्ञ का धुआं वातावरण को शुद्ध करके उक्त रोगों से बचाता है।

सप्ताह में एक बार घर में हवन करके गुणकारी धुएं का लाभ उठाया जा सकता है। विशेषज्ञों ने परीक्षणों से ज्ञात किया है कि यज्ञ व हवन का धुआं पर्यावरण को शुद्ध करने के साथ शारीरिक शक्ति व व्यक्तित्व को विकसित करने में सहायता करता है।

–फ्लैट नं. 14, चंद्रप्रिया अपार्टमेंट
पॉकेट-ए-3, सेक्टर-8, रोहिणी
दिल्ली-110085

उपचार

छोटेलाल यादव

जल द्वारा चिकित्सा एक अमूल्य उपहार

जल द्वारा चिकित्सा मानवता के लिए प्राचीनकाल से चला आ रहा ईश्वर प्रदत्त उपहार है। जल नदी, तालाबों, पोखरों में द्रव्य रूप में उपलब्ध है। प्रकृति प्रदत्त यह उपहार रंगहीन, गंधहीन है।

धरती पर जल संपूर्ण पृथ्वी के दो-तिहाई भाग में प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है। इसी परिमाण में मानव शरीर में उपस्थित है। मानव रक्त में प्रोटीन और प्लाज्मा का मिश्रण बोलचाल की भाषा में सीरम कहलाता है जो मानव शरीर में सत्तर से अस्सी प्रतिशत शरीर में विद्यमान है।

महाभारत युद्धकाव्य में महर्षि दुर्वासा योद्धा कर्ण को ताम्रपात्र में जल को संपूर्ण रात्रि रखकर अरुणोदय में पान करने का उपदेश देते हैं।

वेदों में जल को अमृत माना गया है। तीव्र प्यास में पानी को न पीने पर मनुष्य व्याकुल, कलांत मरणासन्न हो जाता है।

पृथ्वी पर पाये जाने वाले रेगिस्तानों में ऊंट ही आवागमन का एकमात्र साधन प्राचीनकाल से चला आ रहा है। गर्मी में तपते हुए ये रेत के मैदान जहां पर 50 से 60 डिग्री सेलसियस के प्राणलेवा तापमान में जल ही प्राणों की रक्षा करने वाला एक अति दुर्लभ साधन है।

ऊंट जिसे रेगिस्तान का जहाज कहा जाता है, रेगिस्तान में कई-कई दिनों तक बिना जल के जीवित रहता है। उसमें विद्यमान ईश्वर प्रदत्त दुर्लभ गुण पानी को अपने भीतर सहजने की कला है जो मनुष्य जाति में कतई विद्यमान नहीं है। उसकी बुद्धि भी पानी सहजने की कला में कुंठित सी ही है। ऊंट के पेट में एक प्राकृतिक थैली है, जिसमें ऊंट पानी भर लेता है।

रेगिस्तान में जब प्राण जल के लिए छटपटाते हैं, मुख में थूक सूख जाता है तब मनुष्य अपनी बुद्धि का उपयोग करता है, ऊंट का वध कर उसकी पानी की थैली निकाल लेता है एवं उससे प्राप्त जल से अपने प्राणों की रक्षा कर रेगिस्तान को पार करता है।

जल की इस उपादेयता पर मेरे एक अनन्य मित्र को उनके मोबाइल पर एक एस.एम.एस. प्राप्त हुआ। जिसे उन्होंने मुझे दिखलाया। जल की इस उपादेयता पर मैं उनके प्रति कृतज्ञ हो उठा। जल सचमुच ही मनुष्य के लिए ईश्वर की अनुपम कृपाकृति है।

आप भी इस जल का जादू देखें और ईश्वर को धन्यवाद सम्प्रेषित करें। सुबह भोर में तीन गिलास जल पीने से शरीर के आंतरिक अवयव क्रियाशील हो जाते हैं, जिससे शौचादि के कार्य सरलता से पूरे होते हैं।

भोजन से पहले एक गिलास पानी, भोजन पश्चात दो गिलास जल का सेवन पाचन क्रिया को शक्तिशाली बनाता है। रक्त का निर्माण करता है, जीवन दीर्घजीवी हो उठता है। आपका चेहरा स्फूर्त दर्पण हो उठता है।

सोने से पहले एक गिलास पानी का सेवन नींद को शीघ्र आने का निमंत्रण देता है। आपका अनुभव इसकी सत्यता की कसौटी बन जाता है। कभी-कभी कई लोगों को स्नान करने के पश्चात निम्न रक्तचाप की शिकायत रहती है कि एक गिलास जल का सेवन, रक्तचाप को सामान्य स्थिति में ले आता है। तीन लीटर जल का सेवन आपको निर्जलीकरण से आपकी रक्षा करता है।

दूरस्थ गांवों में, जंगलों में गरीब आदिवासी ग्रामीणजन अपनी बीमारियों में जल का ही विभिन्न रूपों में उपयोग करते हैं और स्वास्थ्य लाभ लेते हैं।

भारतीय मनीषियों ने अपना अनुभव ज्ञानरूप में वेदों और प्राचीन ग्रंथों में शब्दबद्ध किया और मानवता को जल की उपयोगिता का संदेश दिया। प्राचीन समय में भारतीय सभ्यता और संस्कृति का विकास नदियों के तट और प्राकृतिक जल स्तोत्रों के आसपास ही रहा।

सब रोगों की एकमात्र औषधि जल ही है। –ऋग्वेद 10/137/7

जीवित प्राणियों में जल ही एक महान कारक तत्व है। सारा संसार जलमय है, अतएव जल को मत रोको, मत मना करो। –भावप्रकाश

भावी पीढ़ी हमकों कभी क्षमा नहीं करेगी, अगर हमने पानी को सहेजने, इकट्ठा करने और जल संवर्धन, जल कृषि के उपाय-प्रयत्न नहीं किए।

महान अर्थशास्त्री श्री लिस्टर जे. ब्राउन जो जल के अर्थशास्त्र पर अध्ययन कर रहे उनके स्तंभ लेखन पुकार रहे हैं।

जल की समस्या दुरू से दुरूह होती जा रही है। ये धीरे-धीरे चुप कदमों से आगे बढ़ रही है। गांवों में खेत की मेंडों पर खेतिहरों में सुगबुगाहट हो रही है। ये गुपचाप वार्तालाप पानी की चोरी के लिए तो नहीं है, सावधान हो जाइए। अभी समय हमारे हाथों में है, संभले नहीं तो शायद जल चिकित्सा के लिए भी अप्राप्य हो जावे।

-एम-29, देवरादेव नारायण कॉलोनी
अम्बेमाता मंदिर के पीछे, रतलाम (म.प्र.)

धरोहर

प्रो. महेन्द्र रायजादा

भारत का प्रहरी हिमालय

पर्वतराज हिमालय! तुम भारतवर्ष के अनंतकाल से प्रहरी हो। अनेक सहस्र शताब्दियों से तुम अडिग खड़े हो। भारतवर्ष का अनादिकाल से लेकर वर्तमान काल तक का इतिहास तुम्हारे दृष्टिपथ से होकर गुजरा है। तुमने भारत के उत्थान पतन को अपने दिव्य चक्षुओं से देखा है। किन्तु तुम सदा मौन रहे हो। आर्यों का उत्कर्ष तथा वैदिक कालीन संस्कृति को तुमने प्रत्यक्ष निहारा था। चारों वेदों के तुम साक्षी हो। त्रेता युग के राम की मर्यादा, द्वापर युग के कृष्ण की कर्मण्यता (कर्मयोग) महावीर और गौतम बुद्ध की सत्य और अहिंसा तुमने देखी थी, जिसने विश्व की मानवता को एक अभिनव करुणा सत्य, अहिंसा तथा सहिष्णुता का संदेश दिया। वीर अर्जुन के धनुष गाण्डीव की टंकार, पाञ्चजन्य का घोष तुमने सुना था। गीता का कर्मयोग का उपदेश तुमने सुना था। भीष्म की अभूतपूर्व प्रतिज्ञा तथा उसके पश्चात महाभारत का दीर्घकालीन कौरव और पाण्डवों के बीच हुए युद्ध को भी तुमने देखा था।

उड़ीसा प्रांत की राजधानी भुवनेश्वर की दया नदी के तट पर हुए कलिंग युद्ध के भीषण नरसंहार को भी तुमने देखा था। यह युद्ध मगध के सम्राट अशोक और कलिंग के शासकों के बीच हुआ था जिसमें हजारों-लाखों सैनिक मारे गये थे। इस युद्ध की विभीषिका से त्रस्त हो अशोक का हृदय परिवर्तन हुआ था। सम्राट अशोक ने बौद्ध धर्म अंगीकार कर लिया था तथा प्रजा के हित के अनेक कार्य किए। तत्पश्चात प्रियदर्शी अशोक महान के नाम से वह प्रसिद्ध हुआ। विश्व विजेता कहलाने वाले सिकन्दर का भारत पर आक्रमण भी तुमने देखा था और उसका प्रत्याख्यान। गुप्तकालीन स्वर्णकाल तथा विक्रमादित्य काल भी तुमने देखा था, तब भारतवर्ष ने कला, साहित्य, ज्योतिष शास्त्र तथा खगोल विद्या में अन्यतम एवं अभिनव उत्कर्ष किया था।

हे नगपति! तुमने यवनों के आक्रमणों को देखा था तथा देखा था मुगलों के शासनकाल को। वीर राजपूतों के शौर्य एवं उनकी चमचमाती तलवारों को, किन्तु राजपूत शासकों की आपसी फूट और अदूरदर्शिता के कारण उनकी पराजय भी हुई। पानीपत के युद्धों में भारत के भाग्य का निर्णय हुआ। पृथ्वीराज चौहान की वीरता और मोहम्मद गोरी की अनेक पराजयों को। पर धोके से चौहान को मोहम्मद गोरी परास्त कर बंदी बनाकर गजनी ले गया और उसकी आंखें फोड़ दी थी। तुमने पृथ्वीराज चौहान के शब्दभेदी बाणों के कौशल को भी देखा था, जो चीर गये थे मोहम्मद गोरी का सीना। वीर सांगा के 80 घावों के तुम साक्षी हो। महाराणा प्रताप और वीर शिवाजी की वीरता एवं स्वाभिमानी भावना का जिन्होंने आतताइयों को अनेक बार परास्त किया और मुगलों की अधीनता कभी स्वीकार नहीं की। तुमने मुगलों की शान-शौकत और वैभव को भी देखा था। फिर तुमने मुगल साम्राज्य का अध:पतन देखा। फिर व्यापारी अंग्रेज फिरंगियों का भारतवर्ष में प्रवेश हुआ। अपनी चतुराई तथा अपनी कूटनीति से धीरे-धीरे भारत में अपने पैर जमाये तथा शासन की बागडोर अपने हाथों में ले ली और एक दीर्घकाल तक (लगभग दो सौ वर्ष तक) इस देश पर शासन किया।

इस बीच भारतवर्ष में अनेक महापुरुषों स्वामी विवेकानंद, चितरंजनदास, दार्शनिक अरविंद घोष, महर्षि दयानंद सरस्वती, गोखले, महात्मा गांधी, लोकमान्य बालगंगाधर तिलक आदि ने अपनी प्रतिभा के बल पर देशभक्ति एवं स्वाधीनता तथा नवजागरण का मंत्र प्रबुद्ध भारतवासियों को दिया। देशभक्त सरदार भगत सिंह, खुदीराम बोस, अश्फाक उल्लाखां, चंद्रशेखर आजाद, लाला लाजपत राय तथा सुभाषचंद्र बोस आदि ने भारतवर्ष की आजादी के लिए अपने प्राणों की आहुतियां दी।

अनेक देशभक्त क्रांतिकारियों तथा महात्मा गांधी जैसे अहिंसावादी देशप्रेमी भारतवासियों के अथक परिश्रम एवं प्रयासों के फलस्वरूप 15 अगस्त 1947 को भारतवर्ष को स्वाधीनता प्राप्त हुई। इस स्वाधीनता का मूल्य हजारों लाखों की मृत्यु से चुकाना पड़ा। भारत का विभाजन हुआ, पाकिस्तान और भारतवर्ष दो पृथक राष्ट्र हो गये। लाखों शरणार्थियों का पाकिस्तान से हिन्दुस्तान में आवागमन हुआ और भाई ने भाई के खून से होली खेली। एक ओर स्वाधीनता का हार्दिक स्वागत किया जा रहा था, पारस्परिक बधाइयों का दौर चल रहा था, अन्तर्मन में आजादी का उल्लास था तो दूसरी ओर अमानुषिक कृत्य तथा मनुष्य-मनुष्य का बोध भी कर रहा था। हे पवर्तराज! तुमने यह सब कुछ देखा और इसे कभी विस्मृत नहीं कर सकोगे।

26 जनवरी 1950 को हमारे देश में गणतंत्र की स्थापना की गई। अनेक बार केन्द्रीय तथा प्रांतीय सरकारों के शांतिपूर्ण निर्वाचन भी हुए हैं। जिस दल का चुनाव में बहुमत होता है, वह अपनी सरकार बनाता है। किन्तु कुछ वर्षों से एक दल को ही बहुमत न मिलने के कारण बहुदलीय सरकारें बन रही हैं इन्हें सरल शब्दों में मिली-जुली सरकार भी कहा जाता है। पर लगभग एक-डेढ़ दशक से कुछ प्रांतों में प्रांतीयता की भावना उग्र रूप धारण करने लगी है। इसे हम दुर्भावना भी कह सकते हैं। भारतवर्ष एक गणतंत्र है सभी प्रांत भारतवर्ष के घटक अथवा अंग है। ये सभी प्रांत मिलकर एक देश हिन्दुस्तान अथवा भारतवर्ष कहलाता है।

एक प्रांत के निवासी दूसरे अन्य प्रांतों के वासियों के प्रति सद्भाव एवं भातृभाव या भाईचारे से सद्व्यवहार करें, यह अति आवश्यक है। प्रांतों की सरकारें भी एक दूसरे से सहयोग करती हैं। इसीलिए समूचा देश एक है। यों तो देश में अनेक समस्याएं हैं- बेकारी, गरीबी, अशिक्षा, अकाल, आतंकवाद, बाढ़ तथा अनावृष्टि आदि की। परन्तु एक प्रांत दूसरे प्रांत की सहायता कर एक-दूसरे पर आने वाले संकट में सहायक होता है। केन्द्रीय सरकार भी अपना सहयोग देती है।

हे पर्वतराज! तुमने भारतवर्ष के प्रहरी के रूप में सदा इस देश की दशा, स्थितियों तथा परिस्थितियों को देखा है। इस देश के अतीतकाल के वैभव, गौरव एवं समृद्धि के तुम साक्षी हो। वर्तमान असामान्य स्थितियों से अपरिचित नहीं हो। ईश्वर से यही प्रार्थना है कि हमारे देशवासियों को वह सद्बुद्धि दे तथा राष्ट्रीय एकता तथा विभिन्न प्रांत वासियों में सद्भावना एवं पारस्परिक प्रेमभाव सदा बना रहे। भ्रष्टाचार से देश मुक्त हो।

-5-ख-20, जवाहर नगर
जयपुर-302004 (राजस्थान)

विवेक

विवेक त्रिवेदी

शीतल पेय और स्वास्थ्य

इस सदी में भौतिकता की आंधी तेज हुई, प्रचार माध्यमों के हमले ने खान-पान की आस्थाओं को झकझोरा तो खाओ पीओ मौज मनाओ संस्कृति की झूठन ने सामान्य भारतीय परिवारों को भी अपनी लपेट में ले लिया। सात्विक आहार-विहार पर दिन गुजारने वाले, खाने के लिए नहीं जीने के लिए खाने-पीने वाले भी सात्विक आहार-विहार को सिर्फ पुस्तकीय चर्चा ही मानने लगे। परम्परागत पेय हेय दृष्टि से देखे जाने लगे हैं।

बदलती मान्यताओं के इस दौर में हमारे परम्परागत शीतल पेयों को अपना फैला संसार जाने-अनजाने ही सिकोड़ लेना पड़ा। कल तक तो राहत हम नींबू, शहद की शिकंजी, ठण्डाई, गुडहल, बेल, शहतूत, संतरे, आम के शर्बत से पाते थे। उनकी जगह बोतलबंद पेयों और साफ्ट ड्रिंक्स उत्पादनों ने ले ली है। लुभावनी शब्दावली और उनके स्वाद और गुणों के विज्ञापनी कीर्तन में उलझे हम कभी यह नहीं सोच पा रहे हैं, नतीजा यह हो रहा है कि बच्चे विटामिनों, प्रोटीनों की न्यूनता के शिकार हो जाते हैं। कुपोषण से पीड़ित बच्चों में यह दोहरी मार होती है। कैंसर, यकृत विकृतियां और पेट के अनेक रोगों के बढ़ने के कई कारणों में यह स्टेटस सिम्बल बनता जा रहा शीतलपेयी शौक भी है। आदत अन्ततः एक जरूरत बन जाती है। इस तरह शीतल पेयों के कारण वह दिन दूर नहीं जब वास्तव में हम एक सामाजिक समस्या में गिरफ्त होकर अपनी तनावजन्य परिस्थितियों को और भी जटिल कर लिया करेंगे।

आइए अब एक नजर उन वस्तुओं के स्तर पर भी लगे हाथों डाल ही ली जाए जिनसे ये ताजगी, तरावट और गर्मी से राहत दिलाने वाले पेय बनते हैं। इन पेयों की बुनियाद अलकतरा मिश्रित रंगने के द्रव्य और कृत्रिम फलों की सुगंध वाले पाउडरों पर निर्भर है। ये स्वास्थ के लिए पर्याप्त खतरनाक है। इन कृत्रिम रंगों और सुगंधों से कई लोगों को एलर्जी हो जाया करती है।

इन पेयों में खास तौर पर दो तरह के संरक्षण द्रव्यों का ही इस्तेमाल होना चाहिए। पर यह कानून कितने पेय बनाने वाले या उनमें मिलावट कर करके बेचने वाले बिचौलिये काम में लेते हैं। यह या तो वे ही जाने या परमात्मा ही। पीने वाला तो आर्डर देकर दुकानदार को जो उसने दे दिया उसी की चुस्कियां लेकर दाम चुकाकर डकार लेकर चल देता है। हां, यदि पेय बेस्वाद हुआ तो वह ब्राण्ड देखेगा, अन्यथा वह क्या पी गया खुद इसे भी कोई उपद्रव हो तो पता चलता है नहीं तो बात आई गई हो गई।

शक्कर यानी चीनी सफेद जहर है। ब्रिटेन के प्रो॰ जॉन युडकिन ने गहन अन्वेषण के बाद सिद्ध किया है कि चीनी मानव के लिए जहर है। शीतल पेयों में स्वाद का तालमेल बिठाने भर के लिए ही नहीं बल्कि विभिन्न रासायनिक पदार्थों की कडुआहट को दबाये रखने के लिए भारी मात्रा में चीनी का उपयोग होता है। चिकित्सा विशेषज्ञों की राय है कि भोजन या पीने की किसी वस्तु में चीनी युक्त खाद्य सामग्री का सेवन ही तो दांतों के छिद्रहीन तथा विकृत होने का खतरा रहता है। चीनी की वजह से मुंह में सूक्ष्म जीवाणुओं की पैदावार बढ़ जाती है। जीवाणुओं और चीनी के बारीक कणों के बीच परस्पर प्रतिक्रिया से एसिड उत्पन्न होता है। इससे दांत घुलने लगते हैं। शीतल पेयों में साइट्रिकया फास्फोरिक एसिड रहता है जो दांतों व मसूड़ों की मजबूती को नष्ट करके चीकनी और चमकदार परत को नष्ट कर जाया करता है।

अमरीका के डॉ. क्लाइव मैकाके ने कई तरह के शीतल पेयों पर अनुसंधान कर ये निष्कर्ष निकाले हैं। कुछ पेयों से जो नामी है तो दो दिन में ही यह चमक करीब-करीब नष्ट हो गई। इनमें मौजूद हानिकारक अम्लों की भरमार से भूख मर जाती है। पाचन क्रिया गड़बड़ा जाती है। फास्फोरिक एसिड शरीर के लौह तत्व को नष्ट कर देता है जिससे मानव शरीर का कैल्शियम फास्फोरेस तालमेल डगमगा जाता है।

लंदन के प्रो॰ इयान मेकलाइड ने चीनी का हृदय पर होने वाला प्रभाव परखा। कई अन्वेषणों के उपरांत उनका निष्कर्ष है कि चीनी की वजह से रक्त में कोलेस्ट्रोल तत्व बढ़ जाता है और उसके कारण रक्त वाहिनियां क्षतिग्रस्त हो जाती है। वे 'हाइयोग्लू केमिया' जैसे यूरोप, अमरीका में फैले रोग तथा हृदय रोगों, कैंसर आदि के लिए अधिक चीनी खाने को ही दोषी मानते हैं। उनका कहना है कि शीतल पेय में घुलकर अन्य रासायनिक तत्वों में मिलकर वह तेज जहर जैसी प्रतिक्रियाएं उत्पन्न करती हैं।

इनके अतिरिक्त हमारे यहां तो बाजारों में जबरदस्त आपाधापी चलती है। मिलावटी पेय, नकली पेय, मिलते-जुलते नामों से प्रचलित पेयों की जगह दूसरा पेय दे देना तथा निर्माण के दौरान आवश्यक सफाई न रखना। भरने से पहले बोतलों की उचित सफाई नहीं करना आदि भी खतरे की घंटिया हैं। ऐसे पेय हाट बाजारों में आमतौर पर बेचे जाते हैं।

हमारे देश में खाद्य पदार्थों में मिलावट निरोधक अधिनियम 1954 की धारा 57 के अंतर्गत शीतल पेय में निर्धारित मात्रा से अधिक विषयुक्त तत्व मिलाना कानूनी तौर पर अपराध बतलाया गया है। इसके उपरांत भी सर्वेक्षणों से पता चला है कि कई शीतल पेयों में भार की मात्रा के अनुसार प्रति दस लाख में 0.5 से 2 भाग सीसा, 7 भाग तांबा, 0.5 भाग संखिया और 5 भाग जस्ता जायज है। सवाल यह है कि क्या ये तत्व जहरीले और जानलेवा नहीं बन जाए। अतः इन आधुनिक शीतल पेयों का उपयोग कम से कम करें तथा स्वास्थ्य को ठीक रखें।

-8-बी, निर्मल नगर, सिंधी कॉलोनी
पो. नीदड़, बैनाड़ वाया-झोटवाड़ा
जयपुर-302012 (राजस्थान)

आहार-चिंतन

नेमिशरण मित्तल

आहार का संबंध शरीर से है, जिह्वा से नहीं

आहार के बारे में यह समझने की जरूरत है कि जो लोग स्वाद के लिए खाते हैं, वे एक प्रकार से आत्महत्या करते हैं। आत्महत्या शब्द तो बहुत कड़ा है परन्तु इससे भी कड़ा कोई शब्द स्वाद के कारण खाने वालों के लिए प्रयोग किया जाना चाहिए। वास्तव में शरीर रक्षा के लिए ही आहार लेना चाहिए। शास्त्रों में एक सूत्र आया है कि 'प्रात: कर दर्शनम्।' विनोबाजी ने एक नया सूत्र दिया है और वह है 'प्रात: मल दर्शनम्' हाथ भी देखना चाहिए और सवेरे-सवेरे ही मल भी देखना चाहिए। हाथ तो दिनभर किए जाने वाले हमारे कर्म की दृष्टि से देखना चाहिए। इसका अर्थ यह है कि इन हाथों से हमें करने योग्य कर्म करना है और सवेरे-सवेरे मल इस कारण देखना चाहिए कि उससे पता लगे कि हमें क्या चीज पची और क्या नहीं पची। यह ज्ञान केवल मल ही कराता है। अच्छा यह है कि डॉक्टर हमसे कहे कि आपका मल जांचना है, हम ही उसको देखें और समझें कि हमने अमुक वस्तु गलत, अधिक मात्रा में या अधिक मसाले के साथ खाई है और उसका परित्याग कर दें या उसके स्थान पर कोई दूसरी वस्तु ले लें, जैसे तैयार नाश्ते की जगह अर्थात् सफेद डबल रोटी की जगह आटे की डबल रोटी लें अथवा मैदे के बिस्कुट न खाकर आटे के बिस्कुट बनवा लें और वे मर्यादा में खाएं। वे बहुत स्वादिष्ट लगते हैं और स्वास्थ्य भी देते हैं। वास्तव में स्वस्थ का अर्थ अपने में स्थित है अर्थात् हम वह खाएं जिसमें हमें न तो पेट दर्द हो, न अपच हो, अपच यानी कब्ज हो और न कोई रोग लगे। स्वस्थ अर्थात् अपने में स्थित। अस्वस्थता का दूसरा पहलू यह है कि वह परनिर्भरता भी लाती है।

स्वस्थ रहने के लिए सबसे आवश्यक तो हमारा भोजन है और फिर हमारा काम और उसके साथ हमारे खड़े होने, बैठने और चलने का ढंग। गीता में पूछा गया है कि स्वस्थ व्यक्ति कैसे चलता है, कैसे बोलता है और उसकी क्या परिभाषा है, कैसे बैठता है यह प्रश्न बहुत महत्वपूर्ण है। हमारे बैठने, चलने, बोलने और काम करने का ढंग हमारे स्वास्थ्य का पैमाना है। मसाले खाने वाले व्यक्ति हर वस्तु में मसाले खाते हैं। यहां तक कि चाय का भी मसाला आता है। यह बड़ी हास्यास्पद स्थिति है। वास्तव में हमें अलग-अलग सब्जी का स्वाद भी मालूम नहीं है अर्थात् हम यह नहीं जानते कि गोभी का स्वाद क्या होता है, गाजर का क्या और लौकी का क्या। यह हमें मसाले छोड़ देने पर पता लगेगा। दूसरी बात यह है कि वास्तव में सब्जी का अर्थ हरी है, सफेद या सूखी नहीं। आलू कोई सब्जी नहीं है। इसमें मशरूम एक अपवाद है। वह आमतौर पर सफेद होता है और खाद्य विशेषज्ञ उसे बहुत लाभदायक मानते हैं।

दूसरा अपवाद फूलगोभी है जिसे कैंसर से बचने के लिए खाना चाहिए अथवा करेला है, परन्तु इन पदार्थों को बिगाड़ कर क्यों खाया जाए। जैसे कि गोभी को गरम पानी से अच्छी तरह धोना चाहिए वरना वह पेट में गड़बड़ पैदा करती है इसका कारण यह है उसमें लाखों छेद होते हैं जो नंगी आंखों से दिखाई तो नहीं पड़ते, परन्तु गरम अथवा उबलते पानी से उसमें रहने वाले कीटाणु नष्ट हो जाते हैं। करेले को अन्य सब्जियों की भांति खाना चाहिए। उसका स्वभाव है कि वह कड़वा होता है। प्रकृति ने ही उसे ऐसा बनाया है। उसके कड़वेपन को नमक, तेल, मिर्च एवं गरम मसाले इत्यादि से दूर करने का उपाय किया जाता है। ऐसा नहीं करना चाहिए, न उसे नमक लगाकर रखा जाए, न उसमें खटाई डाली जाए। खटाई की बात चली तो वास्तव में खटाई किसी खाने की वस्तु में न डाली जाए और उसे मीठे के साथ न लिया जाए। ध्यान रखना चाहिए इसके लिए किसी आहार विशेषज्ञ की पुस्तक पढ़ी जाए या उससे मिलकर सही परामर्श लिया जाए।

गांधीजी ने अपने आश्रम के व्रतों में एक 'अस्वाद का व्रत' भी रखा था। मैंने उनसे पूछा कि स्वाद जैसा व्रत आश्रम के व्रतों में क्यों रखना पड़ा है तो गांधीजी ने सहज भाव से उत्तर दिया कि लोग स्वास्थ्य के लिए नहीं वे पढ़ी-लिखी घरेलू वृद्धाओं द्वारा लाड़-प्यार में संतान के भीतर डाली गई स्वाद की आदत के कारण खाते हैं। आहार का सीधा-संबंध शरीर से है जिह्वा से नहीं। जिह्वा का प्रयोजन केवल यह बताना है कि अमुक वस्तु का अमुक स्वाद है, इससे अधिक कुछ नहीं। इस बात पर जितना बल दिया जाए उतना कम है कि जिह्वा और भोजन का संबंध ग्रहण अथवा अग्रहण करने से न होकर स्वीकार अथवा अस्वीकार करने से है।

-153, हिम्मत नगर, टोंक रोड
जयपुर-302018 (राजस्थान)

मृत्यु पश्चात् आत्मा का अस्तित्व

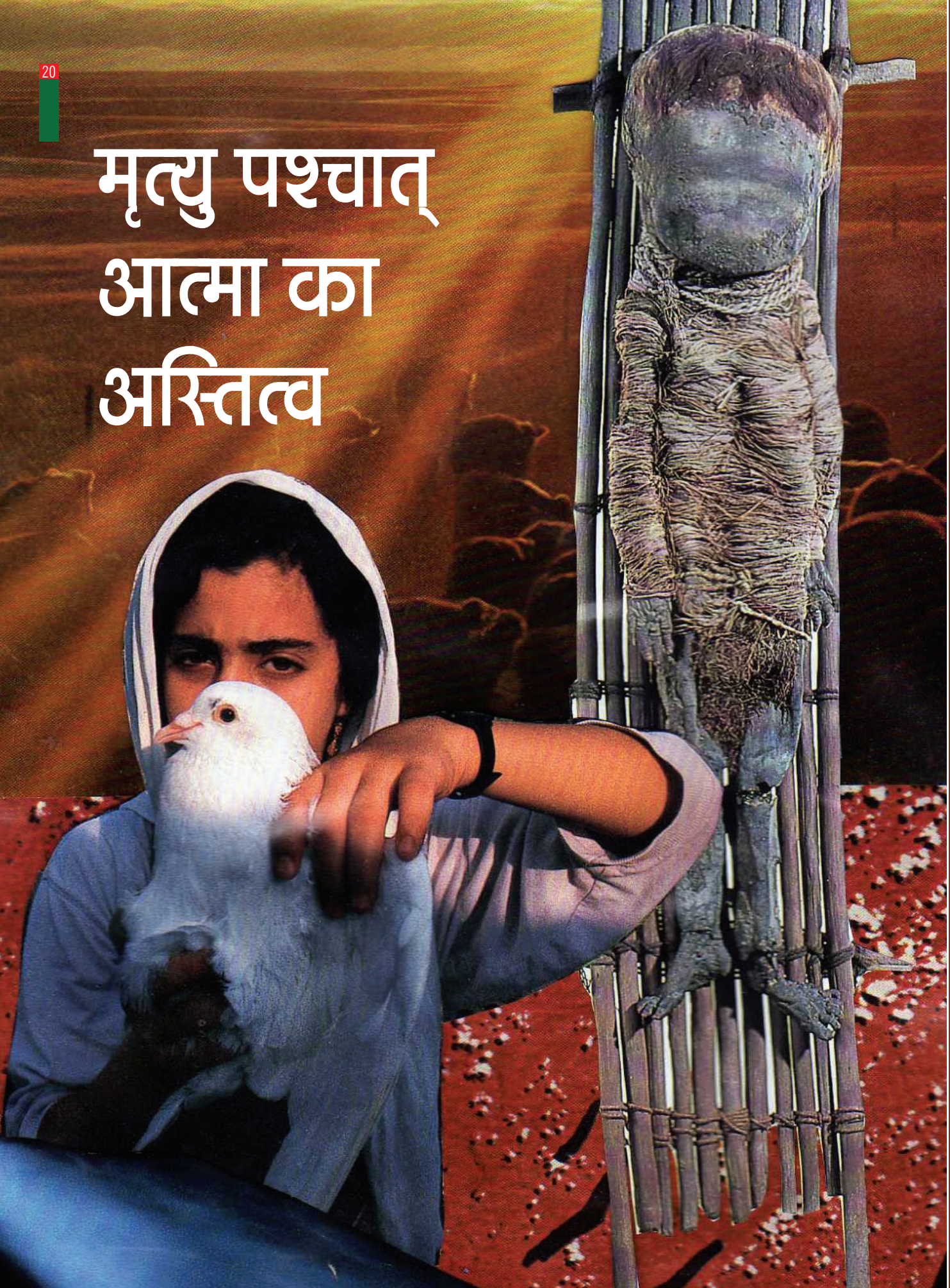

पराविज्ञान

सुरेन्द्र अंचल

''आत्मा न जायते, म्रियते वा कदाचित्।''

शरीर के मरने के बाद भी आत्मा का अस्तित्व बना रहता है, यह भारतीय दर्शन का प्रारंभिक सत्य रहा है। इसकी पुष्टि अनेकों पाश्चात्य वैज्ञानिकों ने भी नि:संकोच की है यथा-पालटेराजेस्ट फेनामेना, आडीटरी हेलसिनेशा डॉ. डेनियर विवर, डैण्डाल, केल्विन, डॉ. गेट्स आदि।

पृथ्वी सकल ब्रह्माण्ड का एक रजकण मात्र है जो नैत्रगम्य है। इस पार्थिवलोक से परे सूक्ष्मजगत में अदृश्य, प्राणलोक, मनोमयलोक, देवलोक, चैतन्यलोक, सत्यलोक (ब्रह्मलोक), असुरलोक आदि अनेकानेक लोक लोकान्तरों का अस्तित्व है। यह समस्त जानकारी मानव के वश की सहज संभव नहीं क्योंकि मानव पूर्णरूप से सचेतन नहीं है। मानव चेतना आज विकास की जिस अवस्था में हैं, वह अर्द्धचेतना या आंशिक चेतना मात्र है।

इन बातों को प्राय: लोग काल्पनिक कह देते हैं- किन्तु आज अनेकों वैज्ञानिक इस बात को नि:संकोच स्वीकार कर रहे हैं कि पृथ्वी से इत्तर भी सैकड़ों लोक हैं। वैज्ञानिकों ने खोज कर गिनाए है कि अकेली हमारी आकाशगंगा में लगभग 1000 000 000 00 (एक, ग्यारह शून्य) नक्षत्र हैं। जिनमें से जीवों के निवास योग्य 25 000 000 00 नक्षत्र हैं। इटली के ब्रूनो ने भी विश्वास व्यक्त किया है कि जीवन के अस्तित्व वाले असंख्यों ग्रह हैं। कतिपय पाश्चात्य वैज्ञानिक यह भी मानने लगे हैं पृथ्वी से दूर अनेकों पिण्डों में जीव की कर्मगति के अनुसार पुनर्जन्म होता है तो फिर प्राणलोक, मनोलोक आदि भी क्यों नहीं हो सकते हैं?

कौषीतकि ब्राह्मणोपनिषद् में स्पष्ट किया गया है कि परमेश्वर का उपासक मरकर अग्निलोक में, फिर वायुलोक में, फिर सूर्यलोक में गमन करता हुआ वरुणलोक से ब्रह्मलोक को पहुंचता है।

यह पार्थिव-शरीर की मृत्य के बाद, जीवन निरंतर हैं। कभी अप्रत्याशित रूप से ऐसी बातें सामने आ जाती हैं तो कभी अदृश्य रूप से अनुभूति करा देती हैं।

इस संदर्भ में अमेरिकन वैज्ञानिकों द्वारा किया गया सामूहिक रूप में एक प्रयोग बहुत चर्चित रहा:-

एक विशेष प्रकार का, पारदर्शी निर्वात कक्ष (चेम्बर) बताया गया। उसमें जीवित चूहे को रखा गया। निर्वात होने के कारण चूहा मर गया तो तत्पर सक्रिय कैमरों में जो फोटेज आए, उनमें अंतरिक्ष में उड़ते हुए आणविक चूहे की सूक्ष्म छाया प्रतिकृति स्पष्ट दिखाई दी।

यह तथ्य आज सभी स्वीकार करने लगे हैं कि शरीर के बिना भी आत्मा का अस्तित्व रहता है। आए दिनों अनेकों उदाहरण सामने आते हैं। अदृश्य आत्माओं द्वारा आत्मीयजनों को वांछित परामर्श व सूचनाएं दी जाती रही, दी जा रही हैं।

आत्मा का परमोद्देश्य अंततोगत्वा परमात्मा की प्राप्ति हैं। यह कार्य किसी एक जन्म में संभव नहीं हैं। अत: अनेक पुनर्जन्म लेते हुए इस परमात्मलोक की प्राप्ति हेतु प्रयासरत रहना पड़ता है।

यह सत्य है कि मृत्युपरांत पंचतत्वों से बना यह अन्नमयकोष तो दहन या दफन द्वारा नष्ट कर दिया जाता है किन्तु हमारे कर्म उसके साथ न तो जलते हैं, न दफन होते हैं। जीवात्मा के साथ ही ये समस्त कर्मतत्व संलग्न रहते हैं। नए जन्म में कुछ अन्य कर्मतत्वों में और वृद्धि हो जाती है परमात्मतत्व में विलीन होने तक यह पुनर्जन्म क्रम निरंतर चलता रहता है।

कबीर ने भी इस मंतव्य का समर्थन अपने ढंग से किया है-

''जेहि मरने से जग डरै, मेरे मन आनंद
कबमरिहौ, कब पाइहौ, पूरन परमानंद।''

सिद्ध संत श्री अरविंद ने भी कहा है-

''जीवात्मा अजन्मा है- जन्म लेता है न मृत्यु! वह एक अवस्था से दूसरी अवस्था में जाया करता है।''

यही बात भारतीय दार्शनिकों ने अनेक-अनेक विधियों से लिखी हैं-

अणोरणीयाम महन्तोमहियान!

अर्थ : आत्मा सूक्ष्म से सूक्ष्म तथा विराट से इतना विराट है कि उसमें समग्र सृष्टि सीमित हो जाए।

कौषीतकि ब्राह्मणोपनिषद् में स्पष्ट किया गया है कि परमेश्वर का उपासक मरकर अग्निलोक में, फिर वायुलोक में, फिर सूर्यलोक में गमन करता हुआ वरुणलोक से ब्रह्मलोक को पहुंचता है। ब्रह्मलोक से आगे एक विरजा नाम की नदी पार करनी पड़ती है- नदी के उस पार एक 'इह्य' नामक वृक्ष है जो पृथ्वी का ही स्वरूप है। आगे.....।

मार्च 1958 की नवनीत में एक घटना छपी थी 'मैनचेस्टर' में एक अंग्रेज ने एक पुस्तक लिखी, उसमें तिब्बत की संस्कृति, भौगोलिक संरचना एवं बौद्धधर्म के सिद्धांतों व दलाईलामाओं संबंधित सांगोपांग वर्णन था। जबकि वह व्यक्ति कभी मैनचेस्टर से बाहर निकला ही नहीं। उसने अंत में लिखा था मैंने दो शरीर पहले बदले हैं, परकाया प्रवेश की यह तीसरी घटना है। अपने गुरु दलाईलामा के आदेश से मैं यह पुस्तक लिखने यहां आया हूं। इसे संपूर्ण लिख चुकने के बाद यह शरीर छोड़ पुन: ल्यासा (तिब्बत) लौट जाऊंगा।

और सचमुच पुस्तक लिख कर प्रकाशक को देते ही उसने शरीर छोड़ दिया। उस अंग्रेज लेखक ने अपना तिब्बती नाम लिवसंग लिखा है जबकि उस अंग्रेज का नाम ग्रियसन था। पुस्तक का नाम है- द थर्ड आई जिसके अनेकों संस्करण अनेक भाषाओं में छपे हैं।

यूरोप में एक ऐसे ही लेखक 'फ्रेडरिक स्पेंसर ओलीवर' ने अपनी पुस्तक एन-अर्थ-उबेलर्स रिटर्न में अपने पिछले बतीस जन्मों का प्रामाणिक विवरण लिखा। 'सर ओलीवर लाज' विश्वविख्यात थियोसोफिर थे। इनकी गणना थियोसोफी के स्थापक वैग दार्शनिकों में की जाती है। उन्होंने अपनी पुस्तक में लिखा है कि मृत और जीवित होने का भेद स्थूलजगत तक ही सीमित हैं। सूक्ष्म जगत में सभी जीवित है। जीवित और मृतकों के मध्य में आदान-प्रदान भी संभव है।

एक घटना 1980 की मैंने स्वयं देखी सुनी। भीम (राजसमंद) की सीनियर हायर सैकेण्डरी स्कूल में अध्यापक था। एक पुलिसकर्मी मेरी कक्षा में आया। वह एक छात्र रामलाल रेगर को थाने में ले जाना चाहता था। मेरी जिज्ञासा जागी। पूछा तो ज्ञात हुआ कि इस बालक ने तेरह-चौदह वर्षों से एक हत्या की अनसुलझी गुत्थी को सुलझाने का दावा किया है। मृतक प्रेमसिंह ठेकेदार था जो वह स्वयं ही था। उसे मारने वाले दो उसके ही तब के साथी बहादुरसिंह और कल्याणसिंह थे, जो रोज भीम से साथ-साथ सायं को प्राय: शराब पीकर तालाब की पाल से होकर गांव जाया करते थे। विचित्र घटना थी। लेखक होने के कारण मुझे रुचि हुई। मैं भी कुछ देर बार सच्चाई जानने हेतु थाने पर जा पहुंचा। थाने में आठ आदमी एक लाइन में खड़े थे रामलाल ने इनके सामने जाते ही लपक कर बूढ़े की गरदन पकड़ ली-यही है बहादुरा! क्यों रे तूने ही तो कुल्हाड़ी से मारा था मुझे। मैं ही था प्रेमसिंह! कल्लासिंह कहां है?

और बहादुरसिंह ने सच उगल दिया! रहस्य से पर्दा उठ गया। उसी बालक ने एक पेड़ पर ही टंगी कुल्हाड़ी भी बरामद करवाई थी।

पुनर्जन्म एक ईश्वरीय व्यवस्था है जो पूर्ण रूप से कर्मफल पर आधारित है। ये सब बातें कैसे झुठलाई जा सकती हैं। ऐसी अनेकों घटनाएं ब्यावर के परामनोवैज्ञानिक डॉ. कीर्तिस्वरूप रावत ने भी अपनी पुस्तक में संग्रहीत की है।

-2/152, साकेत नगर, ब्यावर, अजमेर (राजस्थान)

बहुत काम की है बेल

डॉ. हौसिला प्रसाद पाण्डे

इस भौतिक युग में मनुष्य का जीवन बहुत व्यस्त हो गया है और वह दिन-रात कमाने की धुन में स्वयं को भूल गया है जिसके परिणामस्वरूप उसका स्वास्थ्य दिन पर दिन गिरता जा रहा है। मनुष्य प्रकृति प्रदत्त स्वास्थ्यवर्द्धक अनमोल वस्तुओं की ओर से विमुख हो गया है जिसके कारण वह सिर, पेट, हाथ, पैर और कमर के दर्द से परेशान तो रहता ही है उसे अन्य अनेक शारीरिक व्याधियां घेरे रहती हैं। वह इनके शमन हेतु डॉक्टरों के चक्कर लगाता रहता है। डॉक्टर भी उनसे हाल पूछकर एलोपैथिक कैप्सूल, गोलियां, मिक्श्चर और इंजेक्शन लगा देते हैं और भारी भरकम फीस और कीमत वसूलते हैं।

आज का मनुष्य भोजन तथा विहार के मामले में काफी लापरवाह हो गया है जिसके कारण वह अपने को स्वस्थ नहीं रख पाता है। समय से भोजन, भ्रमण तथा विश्राम के नियमों को भुला दिया गया है। हमारे देश के पर्वतों तथा मैदानों में अनेक लाभदायी मूल्यवान वनस्पतियां, जड़ी-बूटियां बिखड़ी पड़ी हैं जिन्हें अपनाकर हमारे पूर्वज ऋषि-मुनि दीर्घजीवी हुआ करते थे। पृथ्वी पर उपलब्ध सभी पेड़, पौधे, पत्ते, घास-पात आदि सभी में रोगों को समूल नष्ट करने के गुण मौजूद हैं। पेट संबंधी रोगों के लिए 'बेल' अत्यंत ही लाभकारी है।

विभिन्न भाषाओं में बेल का नाम

इसे संस्कृत में विल्व, हिन्दी में बेल या श्रीफल, कोंकणी में लोहभासी, मराठी और बंगला में बेल, गुजराती में बीली या बिलो, पंजाबी में श्रीफल, फारसी में बेह हिन्द, अरबी में सफर जले-हिन्द, अंग्रेजी में बेगालकिन्स तथा लैटिन में एग्ले मार्मेलॉस कहते हैं। यह भारत में सर्वत्र पाया जाता है। यह वनस्पति जगत के रूटेसी कुल का सदस्य है। बेल का पेड़ मध्यम आकार का कंटीला होता है। तना काष्ठीय, कांटे एक इंच तक लंबे काफी तीखे और कड़क होते हैं। पत्तियां प्राय: तीन-तीन के समूह में होती है तथा एकांतर क्रम में जमी होती है। इसके फल बड़े गोल तथा कठोर आवरण वाले होते हैं। कच्चे फल हरे और पककर पीले अथवा केशरिया रंग के हो जाते हैं। इसके पत्तों से (विल्वपत्र) भगवान शंकर का अभिषेक किया जाता है। इसके फलों में विशेष गुणवाला विल्वीन या मारमेलोसीन नामक यौगिक पाया जाता है।

विल्व के औषधीय महत्व

- वायु रोग एवं पाचन क्रिया : विल्व का शर्बत गैस को दूर करता है तथा लू लगने पर भी हितकारी है। पाचन क्रिया को दुरुस्त करता है। मुंह के छाले दूर करने के लिए बेल का गुदा पानी में उबाल कर कुल्ली करने से छाले नष्ट होते हैं। बेल का चूर्ण पेचिस और अतिसार में लाभकारी है।
- बवासीर और अजीर्ण : बेल की जड़ का गुदा मिश्री के साथ खाने में खूनी बवासीर को लाभ होता है। अजीर्ण में भी बेल का मुरब्बा लेने से लाभ होता है।
- फोड़े-फुंसी दूर करने के लिए विल्व की ताजी पत्तियों को भली प्रकार पीसकर पेस्ट के रूप में बांधने पर ठीक हो जाते हैं।
- बिच्छू के डंक मारने पर बेल के ताजे पत्तों को पीसकर बांधने से जहर उतर जाता है।

–कुण्डा, प्रतापगढ़ (उ.प्र.)

स्मृति विकास के घरेलू नुस्खे

स्नेहलता मिश्रा

तुलसी: दस तुलसी के पत्ते, 6 कालीमिर्च, 6 बादाम, थोड़ा-सा शहद मिलाकर पीने से स्मरण शक्ति बढ़ती है।

सेब: जिन व्यक्तियों का शरीर दुर्बल हो एवं विशेष रूप से विद्यार्थियों को स्मरण शक्ति बढ़ाने हेतु सेब का सेवन बहुत उपयोगी है। मध्यम आकार का सेब छीलकर उसको धोकर चबा चबाकर 15 मिनट तक खाएं।

बादाम: 5 ग्राम बादाम रात में भिगो दें। सुबह छिलका उतारकर 2 ग्राम मक्खन और मिश्री मिलाकर रोजाना बहुत एक माह तक सेवन करने से दिमाग की कमजोरी दूर होती है। स्मरण शक्ति बढ़ती है। नेत्र शक्ति तेज होती है।

आंवला: स्मरण शक्ति बढ़ाने हेतु नित्य प्राय: एक आंवला का मुरब्बा खाएं।

सौंफ: सौंफ को हल्की हल्की कूटकर ऊपर से छिलके उतार कर छान लें। इस चूर्ण में समान मात्रा मिश्री मिलाकर पीस लें। एक चम्मच सुबह-शाम दो बार ठंडे पानी के साथ पी लें। इसके सेवन से स्मरण शक्ति बढ़ती है। मस्तिष्क में शीतलता बनी रहती है।

गेहूं: गेहूं की घास का रस पीने से एनीमिया दूर होता है। और स्मरण शक्ति बढ़ती है। आधा मुट्ठी गेहूं अंकुरित कर लें एवं प्रात:काल नमक, हरी मिर्च, टमाटर मिलाकर खाए।

देशी घी: सिर पर प्रतिदिन गाय के शुद्ध घी की मालिश करे। इससे स्मरण शक्ति का तो विकास होगा ही अन्य रोग भी ठीक होंगे।

दूध: एक गिलास देशी गाय का उबला हुआ दूध नित्य प्रात: पीये। इससे स्मरण शक्ति बढ़ती है और शारीरिक बल भी बढ़ता है।

ब्राही: बुद्धिवर्द्धक होने के कारण ही इसे ब्राही बोलते हैं। इसका उपयोग मस्तिष्क विकृति, उन्माद एवं स्मरण शक्ति विकास में किया जाता है। यह बुद्धि बढ़ाने वाली रसायनयुक्त जड़ी-बूटी है। 500 ग्राम नारियल तेल में 100 ग्राम ब्राही रस मिलाकर उबाल लें। इसकी नियमित मालिश करने से मस्तिष्क की निर्बलता दूर होती है तथा बुद्धि बढ़ती है।

अखरोट: दो अखरोट की गिरी एवं 10 ग्राम मिश्री प्रात:काल रोजाना लें। ऊपर से एक गिलास गुनगुना दूध पी लें। इससे शरीर की दुर्बलता दूर होती है।

लोकतंत्र की भाषा

शंभु चौधरी

मारवाड़ी समाज का एक बड़ा घड़ा राजनैतिक विचारधारा को सिर्फ व्यापारी नजरिये से देखने का प्रयास करता रहा है जिसका परिणाम यह हुआ कि एक समय समाज का नेतृत्व करने वाले तपस्वी राजनीति व्यक्तित्व यत: डॉ. राममनोहर लोहिया, स्व. बृजलाल बियाणी, जमनालाल बजाज, सेठ गोविन्ददास मालपाणी, विजयसिंह नाहर, स्व. श्रीमती इन्दुमती गोयनका, स्व. ईश्वरदास जालान, सीताराम सेकसरिया, प्रभुदयाल हिम्मतसिंहका की राजनीति जमीन को दरकिनार कर पीछे दरवाजे की राजनीति को समाज ने अपना लिया। ऐसे लोग राज्यसभा के सदस्य बनाये जाने लगे, जिसका समाज से कोई सरोकार नहीं रहा। किसी ने खुद के धनबल पर तो किसी ने उद्योग घराने के सहयोग से समाज की छवि को राज्यसभा में नीलाम करते रहे। समाज इस तमाशे को तमाशबीन बन देखता रहा। जिसका परिणाम यह हुआ कि समाज के आम राजनैतिक कार्यकर्ताओं का मनोबल धीरे-धीरे कमजोर होता गया। इसमें से कुछ अपनी स्थिति को बनाये रखने के लिए राजनैतिक दलों के खजांची बन गये, अर्थात समाज से धन उगाहने का कार्य करने लगे। मारवाड़ी समाज को इस सब से कोई सरोकार नहीं रहा, चुनाव के समय कुछ नेताओं से दोस्ती बनाना एवं जब वे मंत्री बन जाय तो कुछ लागों को इसका लाभ कैसे मिले इस कार्य के संपादन में खुद की प्रतिष्ठा समझना तो दूसरी तरफ समाज अपने मतदान को महत्वहीन समझने लगा। मतदान के दिन को अवकाश का दिन मानकर ताश या अन्य किसी मनोरंजन को माध्यम अपना कर समय गुजार देते। कुछ तो राजनीति के पण्डित बन जाते, तो कुछ अपनी पहुंच का बखान करने से नहीं चुकते।

एक समय बंगाल के विधानसभा में मारवाड़ी समाज के प्रतिनिधि का होना आवश्यक माना जाता था, आज 2011 के विधानसभा में समाज की उपस्थिति शून्य हो चुकी है। इस राजनीतिक शून्यता व हमारी राजनीतिक प्रतिबद्धता को राजनैतिक दलों ने न सिर्फ इसका मूल्यांकन नेगेटिव रखा बल्कि साथ ही साथ बन्द कमरे में समाज को दया का पात्र भी समझा। जहाँ एक तरफ इतर समाज के किसी भी संकट पर ये दल जो सजगता दिखाते हैं वहीं समाज के साथ होने वाली घटनाओं का राजनैतिक लाभ लेने में भी नहीं चुकते। कुल मिलाकर मारवाड़ी समाज दया का पात्र बन चुका है। हमारा आत्मसम्मान चन्द राजनीतिज्ञों के लिए दया का पात्र बन चुका है। समाज में सामाजिक व राजनैतिक कार्यकर्ताओं का इस दिशा में लगातार यह प्रयास रहते हुए भी, कि किस तरह से समाज की इस उदासीनता को बदला जा सके, सकारात्मक पहल के कोई संकेत दूर-दूर तक हमें नहीं दिखाई दे रहा।

हमें आज यह बात समझनी होगी कि राजनीति हमारे जीवन का एक महत्वपूर्ण हिस्सा बन चुका है। लोकतंत्र में बोलने की भाषा सिर्फ और सिर्फ आपका मतदान है। जो समाज एकजुट होकर अपने मताधिकार का प्रयोग करेगा, उसी समाज की बात विधानसभा या संसद तक सुनी जायेगी, धन के बल पर की जाने वाली राजनीति भले ही किसी वर्ग विशेष को लाभ पहुंचाती हो परन्तु इससे समाज का कतई भला न तो हुआ है न होगा। जो समाज अपने मताधिकार का प्रयोग नहीं करेगा उसे लोकतंत्र की भाषा में गूंगा समाज समझा जायेगा।

-एफ.डी.-453/2 साल्टलेक सिटी
कोलकाता-700106 (प.बं.)

न्यूमरोलॉजी में नंबर 6 का महत्व

नीता बोकाड़िया

चालाक, खुशमिजाज और एवरग्रीन नंबर-5 की रफ्तार से जुड़ने के बाद जरा ठहरिए और देखिए संवेदनशील, जिंदादिल, रोमांटिक और दोस्तों के दोस्त नंबर-6 की रंगीन दुनिया:

किसी भी महीने की 6, 15 और 24 तारीख को पैदा हुए लोगों का स्वामी ग्रह शुक्र होता है। यह सौम्य, शुभ और स्त्रैण ग्रह है। वीनस को देवी माना जाता है। शुक्र खुद क्रियाशील ग्रह है और यह जिन लोगों को प्रभावित करता है, उन्हें भी क्रियाशील बनाता है साथ ही कलात्मक, खूबसूरत और खुशमिज़ाज भी। इससे प्रभावित लोगों का व्यक्तित्व आकर्षक होता है। नंबर 6 लोग भावुक, संवेदनशील, जिंदादिल, रोमांटिक, शिष्ट और रचनाशील होते हैं। ये लोग अपोज़िट सेक्स के लोगों को बड़ी आसानी से अपनी ओर खींच लेते हैं। ये लोग अपने दिखनौटे और लिबास आदि के बारे में ज्यादा ही सजग रहते हैं। बुध और शनि का मित्र होता है शुक्र तथा सूर्य और चंद्रमा का शत्रु। मित्रता-शत्रुता के बावजूद ये अकेले नहीं रह पाते, ये हमेशा लोगों के बीच रहना चाहते हैं। आसानी से दोस्त बनाना भी इन्हें खूब आता है। दोस्तों के मन बहलाव में इनकी रुचि भी होती हैं और सभी को खुश रखना भी जानते हैं। नंबर-6 से जुड़े लोग सुरुचिपूर्ण होते हैं। ये अपने घर को बड़े करीने से सजाते हैं। ललित कलाएं भी इन्हें लुभाती हैं।

ये हंसमुख रहना एवं आशावादी दृष्टिकोण रखते हैं। जीवन की कैसी भी विषम परिस्थिति में ये नहीं घबराते। ये लोग जो योजना बनाते हैं, उसे दृढ़ निश्चय के साथ करते। यह निश्चय हठ की सीमा तक पहुंच जाता है। नंबर 6 लोगों को अपने महत्वपूर्ण कार्य किसी भी महीने की 6, 15, 24 तारीख को करना चाहिए। बुधवार और शुक्रवार इनके लिए अनुकूल दिन होते हैं। गुलाबी, जामुनी और हल्का नीला इनके लिए शुभ होता है। सर्दी, कफ और पेट के रोगों से पीड़ित होते हैं।

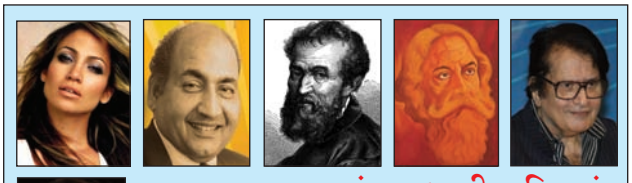

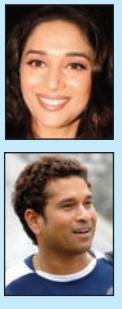

कुछ खास नंबर-6 की हस्तियां

जेनिफ़र लोपेज	24 जुलाई
मोहम्मद रफ़ी	24 नवंबर
माइकल एंजेलो (पेंटर)	6 मार्च
गुरुवर रवीन्द्रनाथ ठाकुर	6 मई
मनोज कुमार	24 जुलाई
माधुरी दीक्षित	15 मई
सचिन तेंदुलकर	24 अप्रैल
ए. आर. रहमान	6 जनवरी

-मो. 09920374449
ई-मेल: nettakbokaria@hotmail.com

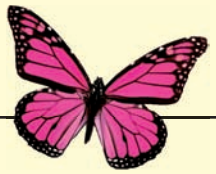

कविताएं

तुम्हारे अंक में

राजेश कुमार

अंशल
तुम्हारे अंक में
अक्षुण्ण रहा
जीवन हमारा!
अनुराग के साथ
हमने थामा था
एक–दूजे का हाथ
अग्नि के संग–संग
फेरों में
वचनों ने हमें बांधा था
वह बंधन
सदा सुदृढ़ रहा
सरिता
सुजल प्रेम का
हर पल बहा
प्रिय!
सौखिक रहा
तेरा सहारा,
अंशल
तुम्हारे अंक में
अक्षुण्ण रहा
जीवन हमारा!
कभी ऊंच–नीच
कभी मनमुटाव
कभी वाक–युद्ध
कभी शांत भाव
कभी रूठना
कभी गुनगुनाना
कभी सोचना
कभी खिलखिलाना
हम–हम रहे
हम युग्म हुये
चलते रहे हैं साथ–साथ
प्रशस्त हुआ
मार्ग सारा,
अंशल,
तुम्हारे अंक में
अक्षुण्ण रहा
जीवन हमारा!

–शिव निवास, पोस्टल पार्क चौराहा से पूरब (रामजी पान दूकान के पास)
चिरैयाटांड,
पटना–800001

रोशन कर जमाने को

डॉ. जे. पी. सक्सेना

अगर हो सके तो रोशनी से
रोशन कर जमाने को।
वैसे तो रोशनी के अंधेरे में लोग
भटकते फिरते हैं इस कदर
कि रातदिन में पफर्क है
उनको बेनजर।।

सजाए मौत से इतना खौफ क्योंकर?
खौपफ तो किया होता उससे
मौत की सजा मिलेगी जिस वजह से।

बदनामी हुई तो परेशां दिखा तू
नेकनामी बटोरता तो यह परेशानी न होती।

बेशर्मों को जमीं पर मुंह छिपाने को जगह तो बहुत है
मगर जगह है जो उन्हें पनाह देने से शर्माती है।

खुदाई खौफ ही जब मन से निकल गया हो
तो तन को जमीं पर रहने की जरूरत ही क्या है।

–एफ. 601, पवित्रा अपार्टमेंट,
वसुंधरा एन्कलेव, दिल्ली–110096

गीत

डॉ. बी. पी. दुबे

संसार की भूल–भुलइन में, जीवन का सफर जारी रखना
कब किसका बुलावा आ जाये, चलने की तैयारी रखना

छोटी सी यह ज़िंदगानी है
माया तो आती–जाती है
उपकार किया जिसने सबका–
उनकी ही अमर कहानी है
अभिमान नहीं रखना मन में, रखना तो खुद्दारी रखना
कब किसका बुलावा आ जाये, चलने की तैयारी रखना

सत्कर्म का पफल तो चोखा है
दुष्कर्म में हरदम धोका है
ऊपरवाले की नज़रों में–
हर–काम का लेखा–जोखा है
न काम क्रोध न लोभ मोह, लालच की न बीमारी रखना
कब किसका बुलावा आ जाये, चलने की तैयारी रखना

यों तो सारा जग सपना है
सपना भी यह भ्रम अपना है
ये भेद–भाव ये ऊंच–नीच
सच पूछो व्यर्थ कल्पना है
फूलों से मुहब्बत करना है, कांटों से भी यारी रखना
कब किसका बुलावा आ जाये, चलने की तैयारी रखना

–होटल संगम के सामने चौराहा
5, सिविल लाइंस, सागर–470001 (म.प्र.)

मुक्तक

मोहन उपाध्याय

(1)
सुख समृद्धि अधिकार हमारा
किन्तु किसे कब मिलता है?
जो माली–सा, सींचे प्रतिदिन
तभी 'बगीचा' खिलता है।

(2)
हम मनुज हैं, मनन करके
काम करने हैं सभी,
बुद्धि का जो दीप हम में
बुझ न पाये वह कभी।

(3)
अपनी–अपनी डपफली सबकी
अपना–अपना राग है,
सब स्वतंत्रा हैं इस जीवन में
जीवन से अनुराग है।

(4)
शब्द स्पर्श रस रूप गंध की
जीवन में झंकार है,
शांति प्रेम में प्रसन्नता है
बहती रस की धार है।

(5)
सत्य को पहले स्वयं ही जानना है
जानकर ही सत्य को फिर मानना है,
स्वाद कैसा है किसी भी भोज्य का?
बस, उसे चखकर हमें पहचानना है।

–26/117, क्रिश्चियनगंज,
विकासपुरी,
अजमेर–305001
(राजस्थान)

पुकारा मैंने कितनी बार

गणेश मुनि शास्त्री

पुकारा मैंने कितनी बार,
लेकिन विश्व समझ ना पाया, मानी न मैंने हार।।
पुकारा मैंने कितनी बार...
हितचिंतक धरती के सारे,
हर पल हिलमिल यही विचारे,
कैसे पर्यावरण सुधारें,
आज स्वार्थ में अंधा मानव, करता है तकरार।
पुकारा मैंने कितनी बार...
पर्यावरण अगर जो बिगड़ा,
झटका ऐसा लगेगा तगड़ा,
समझो मानव उपवन उजड़ा,
सांसें अपनी हो जायेगी, जीवन हेतु भार।
पुकारा मैंने कितनी बार...
पशु–पक्षी को अब ना मारो,
हवा–पानी का रूप संवारो,
आज स्वयं को जरा उबारो,
जीव धरा, जल, अग्नि में है, करले मनुज विचार।
पुकारा मैंने कितनी बार...
सब हैं जीने के अधिकारी,
पिफर क्यों मानव मांसाहारी,
बन जायें सब शाकाहारी,
'मुनि गणेश' चेतन जागे तो, हो सबका उद्धार।
पुकारा मैंने कितनी बार...

जापान

राजेश व्यास मिस्कीन

सूर्य की पहली किरण जापान में,
शाम का शीघ्र स्मरण जापान में।
और उदय की, अस्त की, मध्याह्न की,
है अलग प्रत्येक क्षण जापान में।
हिरोशिमा–पफुकुशीमा स्थल अलग,
वही कण–कण में मरण जापान में।
बुद्ध का और धर्म का और संघ का,
है महाभिनिष्क्रमण जापान में।
होना क्या कंगाल, खड़ा हो जायेगा,
आत्मश्रद्धा का अमल जापान में।

अनुवाद : डॉ. रजनीकांत एस. शार्ह

2, शीलप्रिय, विमलनगर सोसायटी
नवाबाजार, करजण–391240
(गुजरात)

लापता गांव

पूनम गुजरानी

बरगद बाबा से पूछा मैंने, उसने तब एक बात कही
गांव शहर में हुआ लापता, तुमने क्या देखा है कहीं।
बिना झूलों के सावन कैसा
रूठ गई मेहंदी, मल्हारें
सूख गया है हंसता टेसू
ननद–भावज के तीज सिंजारे
पनघट पानी से रीता है, चारों ओर फैले–फैले खाता–बही
गांव शहर में हुआ लापता, तुमने क्या देखा है कहीं।
हरियाले खेतों पर आपफत
आग लगी जब रिश्तों में
जीवन एक व्यापार हो गया
जहां प्यार निभाते किस्तों में
माटी गुमसुम करे पुकार, अब तो जागो, सोओं नहीं।
गांव शहर में हुआ लापता, तुमने क्या देखा है कहीं।
सांझ पड़े दिए शरमाते
नेह की बाती सुस्ताये
खुले न ताले अब तक घर के
रात पड़े पिफर पछताये
जादू कब पश्चिम का उतरे, जानता कोई नहीं
गांव शहर में हुआ लापता, तुमने क्या देखा है कहीं।

–9–ए, मेघ सरमन अपार्टमेंट–1
तेरापंथ भवन रोड, सिटी लाईट
सूरत–395003 (गुजरात)

गज़ल

किशन स्वरूप

गर्दिशों के साथ अपना खुद न दे पाया स्वरूप,
और इन हालात से इतना जो घबराया स्वरूप।

दस्तकें देता रहा था कौन इतनी देर तक,
लौट कर जा ही चुका था, जब तलक आया स्वरूप।

क्यूं जरा सी बात पर यूं ही तुनक जाते हैं लोग,
सोच में बदलाव अब तक क्यूं नहीं आया स्वरूप।

काफिले हैं, रास्ते हैं, मंज़िले हैं, हमसफर,
भीड़ में खुद को अकेला क्यों सदा पाया स्वरूप।

क्यों नहीं सोचा कि उसके दर्द का तू ही सबब,
क्यों हमेशा दर्द अपना ही नज़र आया स्वरूप।

हाथ फैलाए, दिया जिसने, उसी का शुक्रिया,
और बदले में उसे कुछ भी न दे पाया स्वरूप।

क्या करूं अपनी ही परछांई मुझे छलने लगी,
धूप से गर डर लगे तो ढूंढ ले साया स्वरूप।

आईनों से दोस्ती अच्छी नहीं है सोच ले,
आईनों ने चश्म तक को खूब भरमाया स्वरूप

–108/3, मंगल पांडेय नगर, मेरठ (उ.प्र.)

मंडप सजाने हैं

श्याम श्रीवास्तव

अकिंचन हम कहां हैं?
पास यादों के खजाने हैं
हमारे पास जीने के
अभी लाखों बहाने हैं।

पिये प्याले पै प्याले
पर अभी भी प्यास ज्यों की त्यों,
गये कुम्हला सुमन पर
गंध का अहसास ज्यों का त्यों,
कमाई यह हमारी काम
आने का समय आया
मिला मनके, युवा मन के
सुखद मंडप सजाने हैं।

सफर की सीढ़ियां हैं यह
उमर की बात मत छेड़ो
सफर जब तक न पूरा हो
उधर की बात मत छेड़ो,
नदी है तो बनायेगी
कहीं से भी डगर अपनी
पहाड़ों–घाटियों से जो
किये वादे निभाने हैं।

चले हम तो कभी हमने
पलट पीछे नहीं देखा,
जिधर भी हम गये हमने
उधर खींची नई रेखा,
नवाजो मत हमें
बेचारगी के नाम से लोगों,
अभी लब पर हमारे
सैकड़ों नगमें तराने हैं।
हमारे पास जीने के
अभी लाखों बहाने हैं।

–988, सेक्टर आई.एल.डी.ए.
कानपुर रोड, लखनऊ (उ.प्र.)

जगजीत सिंह

जब कृष्ण ने सुदामा को पगड़ी पहनाई

सरहद पार से आए अपने बचपन के दोस्त रजा अली मोहम्मद को प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने कीमती तोहफे नहीं दिये। बस घड़ी के अलावा दी पगड़ी और शॉल। प्रधानमंत्री हैं, सो बहुत कुछ दे सकते थे। लेकिन नहीं, जो सम्मान पांच-सात गज की पगड़ी के साथ जुड़ा है, वह लाखों रुपये के तोहफों में कतई नहीं। अतीत में लौटे द्वापर युग की ओर। विपन्न लेकिन उच्च स्वाभिमानी सुदामा पत्नी के बार-बार तकाजा करने पर जब द्वारकाधीश श्रीकृष्ण के पास मदद के मकसद से पहुंचे, तो स्वाभिमान ने उनके होंस सी दिए। अपनी गरीबी की व्यथा कहते न बनी। लेकिन अंतर्यामी कृष्ण ने उनके मन में चल रहे अंतर्द्वंद्व को जान लिया। बड़े प्रेमभाव से उन्हें द्वारका में रखा। विदा करते समय श्रीकृष्ण ने प्रगट रूप में उन्हें सिर्फ पगड़ी ही पहनाई-इज्जत और सम्मान के तौर पर।

विपन्नता का आलम यह था कि सुदामा की धोती भी फटी हुई थी। पांव में पादुकाएं तक नहीं थी। कहते हैं श्रीकृष्ण ने न उन्हें धोती ही दी, न पादुकाएं। बाकी धन-माल उन्होंने उनके घर अप्रकट रूप से भिजवाया। ऐसा माना जाता है कि भारतीय संस्कृति में बतौर सम्मान पगड़ी भेंट करने की परम्परा भी वहीं से शुरू हुई। बिग बी के फरजंद अभिषेक की बारात में जो चीज सबसे ज्यादा आकर्षित कर रही थी, वह थी मर्द बारातियों के सिर पर बंधी केसरिया पगड़ी। सबका एक ही रंग और बांधने का एक ही स्टाइल। लग रहा था जैसे पगड़ियों का छोटा सा सैलाब उमड़ पड़ा हो।

हमारी संस्कृति व संस्कारों में बहुत गहराई तक रची बसी है पगड़ी। आधुनिकता की प्रचंड आंधी के प्रभाव और भागमभाग जिंदगी की मजबूरी में अन्य कई चिन्हों के साथ-साथ पगड़ी अनेक समुदायों के सिर से भले ही उतर गई है, दिल से नहीं उतरी। इसीलिए जब-जब ब्याह-शादी जैसी खुशी का मौका आता है, चरम आधुनिक संस्कृति के रंग में रंगे लोग भी रंग-बिरंगी कुल्लेदार पगड़िया पहन कर अपनी इस अमूल्य सांस्कृतिक धरोहर के प्रति श्रद्धा और सम्मान प्रगट करते हैं। भारतीय संस्कृति में पगड़ी प्राचीन काल से ही विभिन्न समुदायों में एक विशेष स्थान और सम्मान पाती आई है। यह बात अलग है कि अन्य प्राचीन धर्मों व समुदायों के विपरीत अपेक्षाकृत कहीं नवीन सिख धर्म में वह एक अनिवार्य धार्मिक चिन्ह के रूप में स्थापित हुई। राजा राममोहन राय, बाल गंगाधर तिलक, स्वामी विवेकानंद, लाला लाजपत राय, गोपालकृष्ण गोखले, मदनमोहन मालवीय, सुब्रमण्यम भारती और डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन जैसी अनेक विभूतियों की खास अंदाज में बंधी पगड़ी ने उनके व्यक्तित्व को एक विशिष्ट पहचान दी।

> “हमारी संस्कृति और संस्कारों में बहुत गहराई तक रची बसी है पगड़ी। आधुनिकता की प्रचंड आंधी के प्रभाव और भागमभाग जिंदगी की मजबूरी में अन्य कई चिन्हों के साथ-साथ पगड़ी अनेक समुदायों के सिर से भले ही उतर गई है, दिल से नहीं उतरी। इसीलिए जब-जब ब्याह-शादी जैसी खुशी का मौका आता है, चरम आधुनिक संस्कृति के रंग में रंगे लोग भी रंग-बिरंगी कुल्लेदार पगड़िया पहन कर अपनी इस अमूल्य सांस्कृतिक धरोहर के प्रति श्रद्धा और सम्मान प्रगट करते हैं।”

भारत में जीवन से जुड़ी अनेक महत्वपूर्ण रीति-रस्मों में पगड़ी सदा मौजूद रहती है। किसी को उसकी इज्जत को लीर-नीर होने से बचाने की नसीहत देनी हो तो ‘पगड़ी संभाल पुत्तरा’ की बात की जाती है। सगाई की रस्म में लड़के को और कुछ भेंट न हो, पगड़ी जरूर भेंट होगी। पंजाब में तो यह भी रीत है कि जब दो दोस्त धर्मबाई बनते हैं तो रस्मी तौर पर वे एक दूसरे के साथ पगड़ी बदलते हैं, जिसे स्थानीय बोली में ‘पगवट भ्रा’ यानी पगड़ी की अदला-बदली करके बनने वाले भाई कहा जाता है। पगड़ी हमारी सांस्कृतिक धरोहर और राष्ट्रीय अस्मिता की पहचान रही है।

शहीद फिल्म के गीत ‘पगड़ी संभाल जट्टा’ में पंजाबी जट्ट की पगड़ी ब्रितानी हुकूमत के खिलाफ स्वाधीनता की लड़ाई में राष्ट्रीय अस्मिता के प्रतीक के रूप में उभरी। बॉलिवुड की फिल्मों ने भी पगड़ी को घर-गृहस्थी की इज्जत के प्रतीक के रूप में खूब प्रस्तुत किया। दुल्हन के लाचार बाप द्वारा दहेज के लालची लड़के या उसके बाप को अपनी इज्जत का वास्ता देते हुए सिर से पगड़ी उतार कर कदमों में रख देने के सीन तो अक्सर फिल्मों में देखने को मिलते रहे हैं।

सोचिए तो और किस चिन्ह के साथ जुड़ी मिलेगी इतनी शानदार गौरव गाथा! ■

योग

सीताराम गुप्ता

साधना के लिए चाहिए उचित परिवेश

साधना में सफलता के लिए हमें उपयुक्त समय, स्थान तथा परिवेश का चुनाव करना चाहिए। हमारे ऋषि-मुनि पहाड़ों की कंदराओं अथवा गुफाओं में तपस्या या साधना करते थे। इसका एक लाभ तो यह था कि पहाड़ों पर ठंड होने से साधना करना आसान होता था तथा साथ ही गुफा आदि बंद स्थान पर अधिक ठंड नहीं लगती। एक अन्य महत्वपूर्ण बात यह है कि गुफा आदि अपेक्षाकृत बंद स्थानों पर वात-प्रवाह तीव्र नहीं होता जिससे साधना के दौरान एकत्र ऊष्मा तथा ऊर्जा आस-पास बनी रहती है तथा व्यवधान भी उत्पन्न नहीं होता।

साधना के लिए हमें चाहिए कि हम एकांत स्थान का चुनाव करें जहाँ हम घंटों भी बैठें तो कोई हमें परेशान न कर सके। यह स्थान शोर-शराबे से भी दूर होना चाहिए। इस स्थान पर टेलिफोन, कॉलबेल अथवा कम्प्यूटर आदि इलैक्ट्रॉनिक उपकरण नहीं होने चाहिए। यदि हैं तो इन्हें बंद कर दें। साधना-स्थल ठंडा होना चाहिए। हवा का तेज प्रवाह बिल्कुल नहीं होना चाहिए लेकिन इस स्थान पर घुटन बिल्कुल नहीं होनी चाहिए। । तेज प्रकाश भी अपेक्षित नहीं है। कम रोशनी या अंधेरा अच्छा रहता है। यदि साधना सामूहिक रूप से की जा रही हो तो व्यक्तियों की संख्या के अनुसार स्थान भी पर्याप्त होना चाहिए।

शांत स्थान की तरह साधना के लिए शांत समय का भी चुनाव करना चाहिए। वैसे तो आज के व्यस्त जीवन में सुविधानुसार जब चाहे अभ्यास कर लें लेकिन साधना के लिए प्रात:काल का समय उत्तम है। वैसे भी प्रात:काल साधना करने वालों को बड़ी सुविधा रहती है। जल्दी उठकर नित्यकर्म से निवृत होकर यदि व्यायाम आदि करते हैं तो व्यायाम अथवा योगासन आदि के बाद साधना करें। साधना के बाद व्यायामादि बिल्कुल न करें। ध्यान अथवा साधना के बाद थोड़े अन्तराल के बाद ही नाश्ता अथवा भोजन करें, तुरन्त बाद नहीं। भोजन के फौरन बाद भी साधना वर्जित है। कहने का तात्पर्य यह है कि व्यायाम, ध्यान-साधना आदि से पूर्व तथा एकदम बाद में भोजनादि न करें।

साधना के लिए जमीन या फर्श आदर्श स्थल हैं लेकिन आवश्यकतानुसार पलंग, कुर्सी, गद्दे अथवा कुशन आदि का प्रयोग किया जा सकता है। कुछ अभ्यास जमीन पर या पलंग पर लेट कर तथा कुछ कुर्सी आदि पर सुविधानुसार किए जा सकते हैं। साधना कोई बाहरी बंधन नहीं अपितु मन का अनुशासन है लेकिन साधना स्थल साफ-सुथरा तथा निर्मल अवश्य होना चाहिए। वहाँ किसी प्रकार की गंदगी, कूड़ा-करकट अथवा बेकार की चीजें नहीं होनी चाहिए। दीवारें भी एकदम साफ-सुथरी हों तथा चित्र इत्यादि हों तो अवसरानुकूल। अमूर्त कला कृतियाँ बिल्कुल नहीं होनी चाहिए। प्रकृति के सुरम्य चित्र अथवा फूलों के पौधे इत्यादि हों तो बहुत अच्छा है।

आस-पास किसी प्रकार की दुर्गंध अथवा तेज कृत्रिम गंध नहीं होनी चाहिए। प्राकृतिक गंध जो मनोनुकूल हो साधना में सहायक होती है। ताजे फूलों अथवा वनस्पतियों की गंध अच्छी होती है। धूप, अगरबत्ती तथा कपूर आदि का प्रयोग किया जा सकता है। बंद स्थान या कमरा हो तो धूप जलाने से परेशानी हो सकती है। कपूर का प्रयोग करना चाहिए लेकिन जलाकर नहीं अपितु वाष्पित करके। इसके लिए मच्छर भगाने वाली मैट मशीन का प्रयोग करें।

साधना में गंध का महत्वपूर्ण स्थान है। यदि साधना के समय आप नियमित रूप से किसी गंध का प्रयोग करते हैं तो किसी समय साधना का मन न हो तो भी उस गंध को सूंघने के बाद आप साधना के लिए स्वत: एकदम तैयार हो जाएँगे। गंध आपको साधना के लिए प्रेरित करेगी।

साधना के समय शरीर स्वच्छ होना चाहिये। पसीने की बदबू आपके ध्यान को एकाग्र होने मे बाधा उत्पन्न करेगी। अधिक गर्मी, पसीना, चिपचिपाहट, तेज लू, हवा की सरसराहट तथा तेज सर्दी भी आपका ध्यान अपनी ओर खींचेंगे। इसलिए अनुकूल स्थान का चयन आवश्यक होने के साथ-साथ तेज सर्दी से बचाव के लिए पर्याप्त लेकिन अनुकूल वस्त्रों का चुनाव भी अनिवार्य है। साधना के समय मल-मूत्र आदि का दबाव भी नहीं होना चाहिए। एक बार आपको ध्यान-साधना की आदत पड़ जाए तो कम सुविधाजनक स्थितियों में भी आप बख़ूबी अभ्यास कर लेंगे।

साधना नियमित रूप से की जानी चाहिए लेकिन किसी कारण से व्यवधान उत्पन्न होने पर यदि साधना में व्यवधान या रुकावट आ जाए तो इसका अर्थ यह नहीं कि आप साधना दोबारा प्रारंभ ही नहीं कर सकते। जितनी बार व्यवधान उत्पन्न हो हर अगली बार ज्यादा गंभीरता से साधना शुरू कर दें। प्रतिदिन एक ही समय पर साधना करें तो उसका प्रभाव अपेक्षाकृत ज्यादा अच्छा होता है।

और यदि आप अभ्यास के लिए एक स्थान विशेष का चुनाव करने के बाद प्रतिदिन उसी स्थान पर अभ्यास करते हैं तो बहुत अच्छी बात है लेकिन उससे भी अच्छी बात ये है कि आप करें अवश्य कहीं भी करें किसी समय भी करें। जब आपको आनंद आएगा तो आप नियमित रूप से एक ही स्थान पर, एक नियत समय पर अभ्यास करना शुरू कर देंगे।

साधना के समय पहने हुए वस्त्र आरामदायक हों जो न तो ज्यादा ढीले-ढाले हों और न ज्यादा टाइट ही हों। कमर में बैल्ट, टाइट अंत:वस्त्र, अंगूठी, घड़ी तथा अन्य आभूषणादि न पहने हों तो ठीक है। शरीर पर कोई वस्त्राभूषणादि यदि किसी भी तरह आपका ध्यान आकर्षित करते हैं अथवा परेशान करते हैं तो उनको धारण करने से ध्यान में बाधा उत्पन्न होगी ही। सरसराहट पैदा करने वाले, खुजली पैदा करने वाले, सिंथेटिक अथवा रेशमी या अन्य प्रकार के वस्त्रों की अपेक्षा सूती वस्त्र साधना के लिए उत्तम हैं।

यहाँ एक प्रश्न उठता है कि यदि उपयुक्त स्थितियाँ न हों तो क्या साधना संभव ही नहीं है? साधना के लिए उपरोक्त उपयुक्त स्थितियाँ अनिवार्य हैं विशेषकर साधना शुरू करने के प्रारंभ के दिनों में। इसके लिए जरूरी है कि जब हम सीखना शुरू करें तो सही स्थितियों में ही प्रारंभ करें। इसके लिए कोलाहल से दूर शांत स्थानों पर चले जाएँ। पार्कों में या शहर से बाहर भी जा सकते हैं, आश्रमों में या साधनालयों में। एक बार ध्यान लगाने का अभ्यास प्रारंभ हो गया तो अपेक्षाकृत कम अनुकूल परिस्थितियों में भी अभ्यास करना संभव हो सकेगा।

–ए.डी.-106-सी, पीतमपुरा, दिल्ली-110034

सुखी परिवार अभियान के बढ़ते चरण

सुखी परिवार फाउंडेशन द्वारा संचालित एकलव्य मॉडल आवासीय विद्यालय के शैक्षणिक सत्र का उद्‌घाटन समारोह श्रद्धेय गणि राजेन्द्र विजय के सान्निध्य में दिनांक 13 मई 2011 को कवांट में भव्य रूप में आयोजित हुआ। इसी अवसर पर छात्र-छात्राओं के लिए पृथक-पृथक छात्रावास का शिलान्यास समारोह भी आयोजित हुआ। इसी अवसर समृद्ध सुखी परिवार पत्रिका का लोकार्पण भी किया गया। समारोह की अध्यक्षता गुजरात विधानसभा के अध्यक्ष श्री गणपतभाई वसावा ने की एवं उद्‌घाटन आदिवासी विकास मंत्री श्री मंगूभाई पटेल ने किया।

इस अवसर पर सांसद श्री रामसिंहभाई राठवां, संसदीय सचिव श्री हर्षदभाई वसावा, वड़ोदरा जिला पंचायत की प्रधान श्रीमती सुधाबेन परमार आदि उपस्थित थे। श्री ईश्वरभाई राठवां, श्री विजयभाई राठवां, श्री मुकेश अग्रवाल (दिल्ली) ने अतिथियों का स्वागत किया।

समाधान

मंजुला जैन

संस्कार है एक दीपशिखा

इन्सान की पहचान उसके संस्कारों से बनती है। संस्कार उसके समूचे जीवन को व्याख्यायित करते हैं। संस्कार हमारी जीवनी शक्ति है, यह एक निरंतर जलने वाली ऐसी दीपशिखा है जो जीवन के अंधेरे मोड़ों पर भी प्रकाश की किरणें बिछा देती है।

कदम चलना जानते हैं पर राह का निर्धारण करना नहीं। राह निर्धारण के लिए विवेक चाहिए। दो कदम हर एक के पास समान रूप से संभव है। पर विवेक के संदर्भ में ये बात नहीं। इसके लिए तो जीवन में संस्कारों की सुगंध अपेक्षित है। बोलना तो एक बच्चा 8-9 महीनों में ही सीख सकता है पर कब चुप रहना यह सीखने में तो 80-90 की उम्र भी पर्याप्त हो, जरूरी नहीं। अज्ञान से आवृत चेतना में हित-अहित का विवेक बोध संभव नहीं। इसीलिए चलने से पहले दिशा का सही संज्ञान अपेक्षित है।

भावों का अतिरेक जब चालु हो जाता है तब इच्छाओं को विराम नहीं मिलता है और व्यक्ति जो नहीं करना चाहिए उसको भी कर लेता है। इस भावुकता के कारण ही व्यक्ति दूसरे से जल्दी प्रभावित भी हो जाता है। भावुकता के प्रभाव में कभी परिणाम अच्छा भी आता है, कभी बुरा भी। अधिकांश परिणाम विपरीत ही होता है। जिनके पास संस्कारों की सृजना होती है, उनके लिए वे संस्कार आलम्बन बन जाते हैं।

गृहस्थ समाज में सुखी गृहस्थ जीवन व्यतीत करने के लिए सहिष्णुता की बहुत जरूरत है, अपेक्षा है, जिसकी आज बहुत कमी होती जा रही है। सहन करना जानते ही नहीं हैं। पत्नी हो, मां-बेटे, मां-बेटी, भाई-भाई, भाई-बहन, सास-बहू, गुरु-शिष्य कहने का अर्थ है कि प्राय: सभी में सहन की शक्ति की कमी हो गई है।

एक व्यक्ति अपने भाई को सहन नहीं करता, माता-पिता को सहन नहीं करता और पड़ोसी को सहन कर लेता है, अपने मित्र को सहन कर लेता है। यह प्रकृति की विचित्रता है। सहन करना अच्छी बात है। लेकिन घर में भी एक सीमा तक एक-दूसरे को सहन करना चाहिए, तभी छोटी-छोटी बातों को लेकर मनमुटाव व नित्य झगड़े नहीं होंगे।

इन्सान की पहचान उसके संस्कारों से बनती है। संस्कार उसके समूचे जीवन को व्याख्यायित करते हैं। संस्कार हमारी जीवनी शक्ति है, यह एक निरंतर जलने वाली ऐसी दीपशिखा है जो जीवन के अंधेरे मोड़ों पर भी प्रकाश की किरणें बिछा देती है। उच्च संस्कार ही मानव को महामानव बनाते हैं। सद्संस्कार उत्कृष्ट अमूल्य सम्पदा है जिसके आगे संसार की धन दौलत का कुछ भी मौल नहीं है। सद्संस्कार मनुष्य की अमूल्य धरोहर है, मनुष्य के पास यही एक ऐसा धन है जो व्यक्ति को इज्जत से जीना सिखाता है।

वास्तव में बच्चे तो कच्चे घड़े के समान होते हैं उन्हें आप जैसे आकार में ढालेंगे वे उसी आकार में ढल जाएंगे। मां के उच्च संस्कार बच्चों के संस्कार निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इसलिए आवश्यक है कि सबसे पहले परिवार संस्कारवान बने माता-पिता संस्कानवान बने, तभी बच्चे संस्कारवान एवं चरित्रवान बनकर घर की, परिवार की प्रतिष्ठा को बढ़ा सकेंगे। अगर बच्चे सत्पथ से भटक जाएंगे तो उनका जीवन अंधकार के उस गहन गर्त में चला जाएगा जहां से पुन: निकलना बहुत मुश्किल हो जाएगा।

असल में पूरा विश्व आज एक बाजार बन गया है। चालाक आदमी ने स्त्री को भी बाजार बना दिया। यद्यपि ऐसी महिमाशाली महिलाओं की भी कमी नहीं है जिन्होंने अपनी कुशलता से हर क्षेत्र में सफलता के परचम फहराये हैं। पर ऐसी मूढ़ दृष्टि वाली स्त्रियां आज अधिक हैं जिनको चालाक आदमी ने इस तरह बाजार में परोसना शुरू कर दिया है कि वे इस चाल को समझ ही नहीं पाती हैं। स्त्रियां आज इस तरह बिकाऊ हो गई हैं कि अपने गौरव को समझ ही नहीं पातीं।

एक समय था जब भारत में चरित्र को अधिक महत्व दिया जाता था। सौ वर्ष पहले प्रथम विश्वधर्म सभा में स्वामी विवेकानंद अमेरिका गये हुए थे। वहां उनके कपड़ों को देखकर कुछ अंग्रेज महिलाओं ने उन पर व्यंग्य किया। स्वामीजी ने शांतिपूर्वक उनकी बात सुनते हुए सहज उत्तर दिया—बहनों! आप उस देश में रहती हैं जहां आदमी की कीमत कपड़ों से आंकी जाती है, पर मैं एक ऐसे देश से आया हूं जहां आदमी की कीमत उसके कपड़ों से नहीं अपितु उसके चरित्र से होती है।

सचमुच आदमी की इज्जत कपड़े नहीं होते। बाहर की चमक-दमक भी आदमी की इज्जत नहीं है। आज की भोगवादी संस्कृति ने उपभोक्तावाद को जिस तरह से बढ़ावा दिया है उससे बाहरी चमक-दमक से ही आदमी को पहचाना जाता है। यह बड़ा भयानक है। उससे ही अपसांस्कृतिक मूल्यों को बढ़ावा मिलता है।

भारत को आज सांस्कृतिक क्रांति का इंतजार है। यह कार्य सरकार तंत्र पर नहीं छोड़ा जा सकता है। सही शिक्षा और सही संस्कारों के निर्माण के द्वारा ही परिवार, समाज और राष्ट्र को वास्तविक अर्थों में सांस्कृतिक एवं आदर्श बनाया जा सकता है। इसके लिये सुखी परिवार अभियान के रूप में एक अभिनव उपक्रम राष्ट्रीय स्तर पर संचालित है, और ऐसे ही उपक्रमों से संस्कारों को पल्लवित किया जा सकता है। ■

विचार

आचार्य विजय वीरेन्द्र सूरि

अंत:करण की पवित्रता है मन का तप

हमेशा यह बात याद रखने की है कि मनुष्य की देह ईश्वर प्रदत्त एक उपहार है। इसलिये देह से विदेह होने तक की यात्रा को सार्थक करना मनुष्य का परम कर्तव्य है। देह तो सदा किसी की रहती नहीं। उत्पन्न होने वाली वस्तु का विनाश अवश्यंभावी है। जिस प्रकार कपड़े जीर्ण होने पर उन्हें बदल लेते हैं उसी प्रकार जीवात्मा विभिन्न शरीरों में भ्रमण करता रहता है। प्रत्येक शरीर में नये माता-पिता और संबंधियों-रिश्तेदारों के शरीरों का संयोग होता है। इसलिये जब भी कोई कोई प्राणी देह से विदेह होता है तो उसे शोक नहीं बल्कि उत्सव का विषय मानना चाहिए। वास्तव में, माता-पिता, मित्र संबंधी आदि कोई नहीं है। इस व्यर्थ के भ्रम से छुटकारा पाने के लिए पारमार्थिक सत्य पर विचार करना चाहिए।

आत्मज्ञान ही पारमार्थिक सत्य है। आत्मा एक चेतन तत्त्व है, जो अपने रहने के लिए उपयुक्त शरीर का आश्रय लेता है और एक देह से दूरी देह में जाता है। आत्मा ईश्वर का अंश है। जो गुण ईश्वर में हैं, वही गुण अंश रूप जीव में भी होते है। ईश्वर अविनाशी है, इसलिये जीव भी अविनाशी हुआ। इसलिये कहते है कि आत्मा अजर-अमर है। भौतिक शरीर आत्मा को धारण करने के लिए विवश होता है। जैसे घड़े का प्रकाशक सूर्य घड़े के नाश हो जाने पर नष्ट नहीं होता, वैसे ही देह का प्रकाशक आत्मा देह के नष्ट होने पर नष्ट नहीं होता। नित्यज्ञान स्वरूप आत्मा न तो जन्मता है और न मरता ही है। यह न तो स्वयं किसी से हुआ है और न इससे कोई भी हुआ है अर्थात् यह न तो किसी का कार्य है और न कारण ही है। यह अजन्मा, नित्य, सदा एकरस रहने वाला और पुरातन एवं शाश्वत है अर्थात् क्षय और वृद्धि से रहित है। शरीर के मारे जाने पर भी यह मरता नहीं है। यह सारा जगत पूर्व में आत्मा ही था, अन्य कोई तत्त्व नहीं था, उस आत्मा ने अपनी इच्छा से लोक का सृजन किया है। जिससे ये संपूर्ण प्राणी जन्म लेते, जन्म लेकर जिससे जीवन धारण करते तथा प्रलय के समय जिसमें पूर्णत: प्रवेश कर जाते हैं, वह ब्रह्म है, उसको जानने की इच्छा करो।

अंत:करण को शुद्ध करने के लिए कर्म, भक्ति, ज्ञान, जप, तप, प्राणायाम तथा सत्संग आदि अनेक साधन हैं। ये समस्त साधन विषयासक्ति के त्याग पर बल देते हैं। विषयासक्ति का त्याग ही वास्तविक विषय-त्याग है। मन की प्रसन्नता और शांतभाव एवं भगवत्-चिंतन करने का स्वभाव, मन का निग्रह और अंत:करण की पवित्रता-मन के तप हैं। इसी से मन अंतर्मुखी हो सकेगा। कबीरदास जी कहते हैं कि मनुष्य का मन भलाई-बुराई, उचित-अनुचित सब कुछ जानता है, फिर भी अनुचित कार्य, पाप-कर्म करता है। यदि हाथ में दीपक होते हुए भी कोई व्यक्ति सामने न देखे और कुएं में गिर पड़े तो उसकी रक्षा कौन कर सकता है। आत्म-परीक्षण के द्वारा ही अपने दोष दूर किये जा सकते हैं और इसके साथ ही दृश्यमान जगत से सर्वथा मुंह मोड़ा जा सकता है। शून्य गगन में प्रकाशित ब्रह्म-ज्योति का दर्शन करने वाला मन उस जीव के समान होता है जो आकाश में ही सदैव विचरण करता है। आनंद की खोज करना, उसे पाना, अधिकृत करना और जीवन में चरितार्थ करना ही उसके संपूर्ण जीवन का हेतु है। ■

मंथन

आचार्य महाश्रमण

स्वस्थ लोकतंत्र की बुनियाद

लोकतंत्र प्रशासन की एक सुंदर प्रणाली है। यह प्रणाली प्रायः अहिंसा पर आधारित है। लोकतंत्र में अनेक लोग होते हैं इसलिए कभी वैमत्य भी हो सकता है और एकमत्य भी हो सकता है। किन्तु सरकार में स्थिरता रहनी चाहिए। वैमत्य के कारण अथवा पारस्परिक विद्वेष के कारण सरकार गिर जाती है तो कठिन स्थिति पैदा हो जाती है। पांच वर्षों के लिए एक सरकार सत्ता संभालती है किंतु जब बीच में ही चुनाव की स्थिति बन जाती है तो उसमें न जाने राष्ट्र की कितनी शक्ति खर्च हो जाती है। इस मध्यावधि चुनाव की स्थिति को अच्छा नहीं माना जा सकता। पांच वर्षों तक एक सरकार नहीं चलने का प्रमुख कारण है कि लोकतंत्र में अनेक दल हो जाते हैं और वे स्थिति को खराब कर देते हैं। जहां अनेक दल साथ हों वहां राष्ट्रहित की भावना हो, अनपेक्षित विरोध न करने की भावना हो और अगर विरोध भी हो तो सत्य के लिए, देशहित के लिए हो तो वह विरोध भी लाभदायी बन सकता है। जो विरोध मात्र सत्ता पर आसीन सरकार को गिराने के लिए ही किया जाता है वह विरोध राष्ट्र के लिए अहितकर बन जाता है।

मैं कई बार सोचता हूं कि एक पार्टी मजबूत आ जाए तो सरकार निर्विघ्न रूप से चल सकती है। अनेक दल हों और साथ में अनेकांत हो तो कोई कठिनाई वाली बात नहीं लगती। किंतु अनेकांत के अभाव में अनेक दलों का होना लाभदायी नहीं लगता। अनेकांतविहीन अनेक पार्टियों के हो जाने से सरकार की मजबूती में अंतर आ जाता है। लोकतंत्र में गिरावट भी आ सकती है। अनेक दलों की व्यवस्था में जब स्वार्थपूर्ति में खतरा दिखाई देता है तो लगाम खींच ली जाती है और सरकार गिरा दी जाती है। कुछ दलों के आधार पर सरकार का पतन भी हो सकता है और कुछ दलों के आधार पर सरकार बनी भी रह सकती है। जहां इस प्रकार की स्थिति होती है वहां सरकार को जैसे तैसे बनाए रखने का प्रयास किया जाता है। ऐसी स्थिति राष्ट्र के लिए हितकारी और मंगलकारी नहीं हो सकती।

अंग्रेजी में कहा गया है–

Without duty and discipline the diety of democracy shall be doomed to death and destruction.

लोकतंत्र में कर्तव्यपरायणता नहीं होती, अनुशासनबद्धता नहीं होती तो लोकतंत्र का देवता विनाश अथवा मृत्यु को प्राप्त हो जाता है। लोकतंत्र में कर्तव्यपरायणता हो, अनुशासनबद्धता हो और राष्ट्रहित की भावना हो तो लोकतंत्र बहुत अच्छा काम कर सकता है।

लोकतंत्र में प्रशासक जनता ही होती है। जनता के द्वारा निर्वाचित व्यक्ति ही शासन संभालता है। जनता के द्वारा ही जनता का शासन होता है। ऐसी स्थिति में प्रशासन करने वाले व्यक्ति अच्छे आएं, उनका स्तर ऊंचा हो तो देश का भला हो सकता है।

सरकार के लिए दो बातें आवश्यक हैं–स्थिरता और स्वच्छता। गतिशीलता को भी स्थिरता का आधार अपेक्षित होता है। स्थिरताविहीन गतिशीलता हो ही नहीं सकती। यदि गति करना है तो किसी स्थिर तत्व का आलंबन लेना ही होगा। चक्का घूमता है, कील स्थिर रहती हैं कील की स्थिरता चक्के की गति में सहयोगी बन जाती है। आदमी सीढ़ियां चढ़ता है, गति करता है किंतु सीढ़ियां स्थिर रहती हैं इसलिए आदमी ऊपर चढ़ने में सफलता प्राप्त कर लेता है। सरकार में यदि अस्थिरता रहती है तो वह देश के लिए नुकसानदेय बन सकती है और स्थिरता होती है तो वह जनता के विकास में सहयोगी बन जाती है। सरकार में यदि स्थिरता है किंतु अस्वच्छता है तो भी विचारणीय बात हो जाती है। इसलिए स्थिरता भी हो और स्वच्छता भी हो, दोनों तत्वों का समावेश हो तो कुछ हित की बात हो सकती है। जैसे पानी में अस्थिरता हो और मलीनता हो तो पानी के भीतर क्या है, देखा नहीं जा सकता। वैसे ही सरकार में अस्थिरता और अस्वच्छता हो तो देशहित की बहुत आशा नहीं की जा सकती।

नदी के दोनों किनारों पर दो नगर बसे हुए थे। एक नगर की प्रजा बहुत सुखी थी, राज्य का बहुत विस्तार हो रहा था। चारों तरफ उसकी यशोकीर्ति फैल रही थी। दूसरे नगर की प्रजा दुःखी थी, राज्य का विस्तार भी नहीं था और उपद्रव भी फैल रहे थे। पहले नगर के अधिकारी से सुख-संपन्नता का कारण पूछने पर उसने कहा–मेरे पास चार चौकीदार हैं–1. सत्य 2. प्रेम 3. न्याय 4. त्याग। पहला चौकीदार मुझे कभी भी असत्य बोलने नहीं देता जिसके कारण मैं प्रजा का विश्वासपात्र बना हुआ हूं। दूसरा चौकीदार मुझे घृणा और तिरस्कार से बचाता है जिसके कारण मैं सबके साथ प्रेम से बोलता हूं। इसलिए प्रजा मुझे बहुत स्नेह, सत्कार और सहयोग देती है। मेरा तीसरा चौकीदार मुझे अन्याय से दूर रखता है। नीतिपूर्वक कमाई के कारण मेरे राज्य में धन की बहुत वृद्धि हुई है। चौथा चौकीदार मुझे हमेशा स्वार्थ चेतना से ऊपर उठाए रखता है। इसलिए मेरा यश चारों दिशाओं में फैल रहा है।

भारत की जनता में भी सत्य के प्रति आस्था हो, प्रेमपूर्ण व्यवहार हो, न्यायमार्ग पर चलने का साहस हो और त्याग के पथ पर बढ़ने का संकल्प हो तो देश का बहुत विकास हो सकता है। ■

सदा सुहागन वधू

मृदुला सिन्हा

''सुमंगलीर इदं वधूर इमा समेत पश्यत
सौभाग्यम अस्मै दवायात्थास्तं वि परेतन''

हमारे घर बहू आई है। वह अपने साथ मंगल लेकर आई है। आइए! आप सब लोग मिलकर इसे देखिए। उसके सौभाग्य की कामना कीजिए। हम सब उसे 'सदा सुहागन' रहने का आशीष दें।

ऋग्वेद का यह मंत्र नई वधू के घर आने पर उस घर की मानसिकता दर्शाता है। घर छोटा हो या बड़ा, झोपड़ी हो या महल, परिवार धनी हो या गरीब, बहू तो मंगल लेकर ही आती है। घर में वधू का आना शुभकारी होता है। क्योंकि घर उसी से बनता है। एक नया परिवार बनता है। इसलिए अक्सर वधू को ही परिवार कहा जाता है। घर में उसका मंगल उत्सव ही है। आज भी समाज के हर क्षेत्र में वधू का स्वागत होता है। उपरोक्त वेद मंत्र के भाव को हमने अब तक कायम रखा है। तभी तो अपने मित्रों को बुलाते हैं। वधू दिखाई एक बड़ा उत्सव होता रहा है। समय और स्थान के अनुसार इसका रूप बदलता रहा है। कुछ दिन पूर्व तक गांवों में वधू दिखाने का रूप अलग था। घूंघट में लिपटी बहू का मुखड़ा घूंघट उठा कर दिखाया जाता था। वधू के आंख मूंदे होते थे। बहू का मुख देखकर महिलाएं अपना उद्गार प्रगट करती थीं–''बहुत सुंदर। लक्ष्मी आई है। भगवान भाग्य दें। नाती-पोते वाली बने। सदा सुहागन रहे।''

वेद के मंत्र का अनुवाद ही तो हैं ये उद्गार। जो वधू को लक्ष्मी और मंगलकारी नहीं मानते, उनके घर की शांति भंग हो जाती है। स्त्री के सुहागन रहने अर्थात पति-पत्नी के साथ रहने से घर में आनंद बना रहता है। इसलिए वधू का स्वागत वैसे ही होना चाहिए जैसा इस मंत्र में है। वह सम्राज्ञी बनकर ही रहे। तभी तो घर राजमहल होगा, झोपड़ी हो या महल। वधू घर की धूरी होती है। यह एहसास स्त्री को भी होना चाहिए और पुरुष को भी। वह मंगलकारी तभी होती है जब परिवार के सभी सेवक-सेविकाएं, अतिथि और पशु-पक्षियों का भी मंगल चाहती है। इसी प्रकार पति के साथ रहने से नहीं, दोनों के बीच मधुर संबंध और पति द्वारा सम्मानित होकर वह सौभाग्य प्राप्त करती है। सुहागन होती है।

शनि करते हैं न्यायाधीश का कार्य

मुरली कांठेड़

भारतीय ज्योतिष शास्त्र के अनुसार मान्यता है कि सूर्य-राजा, बुध-प्रधानमंत्री, मंगल-प्रधान सेनापति, शनि-न्यायाधीश, राहु व केतु-प्रशासक, गुरु-पथ प्रदर्शक, चंद्रमा-मन और शुक्र-वीर्यबल। यह भ्रम भी नहीं रहना चाहिए कि कोई ग्रह व्यक्ति के रूप में विद्यमान है। ये सारे ग्रह ठोस है। यह भी सत्य है कि इनका प्रभाव अवश्य हमारे जीवन पर पड़ता है, उससे हम बच नहीं सकते हैं। बचाने वाला तो सर्वशक्तिमान ईश्वर है।

जब समाज में अपराध बढ़ता है, पापाचार बढ़ता है, धर्म के विरुद्ध आचरण होता है, तब शनि अपने प्रभाव का उपयोग कर राहु-केतु को निर्देश देते हैं, ऐसे व्यक्ति को दंडित करने का। दण्ड शनि के आदेशानुसार राहु-केतु देते हैं। शनिदेव की कचहरी में दण्ड पहले दिया जाता है, मुकदमा बाद में चलता है। मुकदमा भी इस बात के लिए चलता है कि अगर उस व्यक्ति का चाल-चलन ठीक रहे तो उसे पुनः खुशहाल किया जाये या नहीं।

अगर पापी व्यक्ति अपनी प्रवृत्ति को नहीं छोड़ता है तो शनिदेव सिपाही के तौर पर राहु-केतु को पीछे लगा देते हैं। राहु सिर में एवं केतु पैरों में मार करते हैं। कोर्ट, जेल, अस्पताल के चक्कर भी इसी कारण काटने पड़ते हैं।

शनिदेव के निर्णय को उलटने का प्रयास कोई भी ग्रह नहीं कर सकता है, यानी शनिदेव का न्यायालय ही सर्वोच्च है। उसकी अपील कहीं नहीं हो सकती। जैसे एक बार प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज हो गई तो फिर कुछ नहीं हो सकता। वहां सी.आर.पी.सी. का सेक्शन 482 भी काम नहीं आता है। सूर्यदेव जो राजा है वे भी शनि के निर्णय एवं कार्य में दखल नहीं देते हैं।

शनिदेव या सूर्यदेव के पास अगर मर्सी पिटीशन लगाई जाये तो कुछ हो सकता है। भारतवर्ष में केवल तीन शनिदेव के शक्तिपीठ हैं, वहां पिटीशन लगती है।

शनिदेव को जुआ-सट्टा खेलना, शराब पीना, परस्त्रीगमन, सूदखोरी, झूठी गवाही देना, निर्दोषों को सताना, पीठ पीछे कोई कार्य करना, अपने परिजनों का अपमान करना, पशु-पक्षियों को मारना आदि कार्य पसंद नहीं है।

शनिदेव को प्रसन्न करने के उपाय हैं, गुरुजनों एवं परिजनों की सेवा, बड़ों का आदर, व्यसनमुक्त जीवन एवं निर्धनों की सेवा। विदित रहे शनिदेव नवम्बर में राशि परिवर्तन करेंगे।

-ए-56/ए, प्रथम तल, लाजपत नगर
नई दिल्ली-110024

मोती: एक शांतिप्रदाता रत्न

मुनि धरणेन्द्र

नव मन अत्यंत ही चंचल एवं शक्तिशाली होता है। इस पर काबू पाने के लिए मोती एक शक्तिशाली रत्न है। अपने अद्भुत प्रभाव के कारण इसे पंच महारत्नों में स्थान प्राप्त है। मोती की नौ प्रकार की किस्मे हैं-

1. गजमुक्तक: ऐरावत वंश के जिन हाथियों का जन्म उत्तरायण या सोमवार के दिन पुष्य या श्रवण-नक्षत्र में होता है उनके कंठ या मस्तक में यह मोती पाया जाता है। यह आंवले के आकार का चिकना, चमकदार तथा सर्वश्रेष्ठ होता है।

2. सर्पमुक्तक: अत्यंत उच्चकोटि या दीर्घजीवी सर्प के मस्तक में यह मोती पाया जाता है। कुछ लोग इसे नागमणि भी कहते हैं। यह बहुत दुर्लभ, स्निग्ध तथा मध्यम आकार का होता है।

3. शंकमुक्तक: यह मोती समुद्र के पांचजन्य जाति नामक शंखों में पाया जाता है। कभी-कभी इन मोतियों में धारियां भी पायी जाती हैं। यह अण्डे के बराबर चिकना और सुडौल होता है।

4. शूकरमुक्तक: यह मोती वाराह वंश के सुअर के मस्तक में पाया जाता है। इसका रंग हल्का पीला या गुलाबी-सा होता है। यह पुत्र-प्राप्ति में सहायक होता है।

5. वंशमुक्तक: बांस की पोरी में इस मोती का निर्माण होता है। यह मोती बहुत ही दुर्लभ है।

6. मीनमुक्तक: यह मोती मछली के पेट में पाया जाता है। हजारों-लाखों मछलियों में से यह किसी एक मछली में मिलता है। कहा जाता है कि इस मोती को धारण करने से पानी के अंदर की वस्तुएं साफ दिखायी देने लगती है।

7. मेघमुक्तक: पुष्य या श्रवण नक्षत्र में आकाश से वर्षा होने पर यह मोती टपकता है। यह मेघवर्ण का चमकदार और गोल होता है।

8. आकाशमुक्तक: पुष्य नक्षत्र में आकाश से टपकी बूंद सीप में गिरने से यह मोती बनता है। यह श्वेत, चमकदार तथा विभिन्न आकार का होता है।

9. सीपमुक्तक: स्वाति नक्षत्र में वर्षा की बूंद सीप में गिरने से यह मोती बनता है, वह सीप मोती कहलाता है।

उपरोक्त प्रकार के मोतियों में से कई प्रकार के मोती प्राप्त करना बहुत दुर्लभ है। किसी-किसी भाग्यशाली को ही यह रत्न प्राप्त होता है। ऐसा दुर्लभ मोती समस्त अभाव को दूर करने तथा मनोकामना पूर्ण करने वाला होता है।

असली और नकली मोती में पहचान के बहुत-से उपाय हैं, जैसे-छेद करने पर असली मोती का छेद एकसार होता है, जबकि नकली मोती में छेद करने से छेद चौड़ा हो जाता है। भूसी रगड़ने पर असली मोती की चमक बढ़ जाती है। इसके अतिरिक्त असली मोती पानी में डालने पर पानी से किरणें निकलती दिखायी देती हैं।

मोती मानसिक शांति, सौंदर्य, बुद्धि तथा सम्मान दिलाने में सहायक सिद्ध होता है। जन्मकुण्डली में चंद्रमा जिस भाव का अधिपति होता है उस भाव संबंधी फलों की वृद्धि मोती पहनने से होती है। यह मानसिक तनाव, उदासी तथा उद्विग्नता को दूर करके उत्साह तथा जोश का संचार करता है और मनोबल को बढ़ाता है।

मोती धारण करने के लिए शुक्ल पक्ष का सोमवार सर्वाधिक उपयुक्त रहता है। सामान्यत: 2, 4, 6 या 8 रत्ती के मोती को चांदी में जड़वा कर रविवार को रात्रि को कच्चे दूध में भिगोगकर रख दें। फिर सोमवार सुबह गंगाजल से धोकर धूप-दीप दिखा कर दायें हाथ की कनिष्ठिका में धारण करें। रत्न-धारण करने से पूर्व इसकी अनुकूलता तथा लाभ प्राप्त करने के लिए चंद्र के निम्न मंत्र का जाप करना उचित रहता है-

ऊँ श्रां श्रीं श्रौं स: चन्द्राय नम:।

रत्न धारण के पश्चात् चंद्र-दान भी रत्न की शुभता-वृद्धि में सहायक होता है। इसमें कपूर, घी, मिश्री, मोती, चावल, दूध, दही, श्वेत पुष्प, दक्षिणा आदि किसी मंदिर में दान दें।

आयुर्वेद में भी मोती का महत्वपूर्ण स्थान है। मानसिक रोग, रक्तचाप, दंतरोग, उदर-विकार तथा मासिक धर्म संबंधी रोगों में इसका उपयोग किया जाता है। निर्बलता, ज्वर, पथरी आदि रोगों में भी यह लाभदायक है।

श्री आनंदमूर्ति

धर्म की धारणा

धर्म का अर्थ है जो धारणा करता है या जिसे धारणा करके रखा गया है। जैसे अग्नि का धर्म है जलाना! हर एक वस्तु का एक धर्म है और उसी के द्वारा उसका अस्तित्व सूचित होता है। अस्तित्व का निर्धारण किया जाता है और यदि वह धर्मच्युत हो जाता है तो उसका नाम-रूप ही बदलना पड़ता है। जैसे, यदि आग जलाने की क्षमता खो बैठती है तो इसे आग कह कर नहीं पुकारा जाएगा। वह जो कार्य कर रही है उसी के आधार पर पुकारा जाएगा, आग नहीं। हर वस्तु का एक निर्दिष्ट धर्म है। इस कारण मनुष्य यदि कुछ करेगा तो समाज-व्यवस्था, अर्थ, नैतिक व्यवस्था, साधना या जीवन में सब कुछ धर्म-सम्मत रूप में करना होगा। क्योंकि धर्म ही विधाता-निर्दिष्ट व्यवस्था है।

हाथी का चेहरा एक प्रकार का है। वह अपना स्नान अपने शरीर के अनुरूप ही करेगा। वह सूंड के द्वारा ही पानी खींच कर स्नान करेगा, हाथ में पानी लेकर स्नान नहीं करेगा।

उसी तरह से मनुष्य को भी धर्मसम्मत रूप से कार्य करना होगा और चूंकि धर्म विधाता द्वारा निर्दिष्ट व्यवस्था है, अत: मनुष्य जो भी कार्य धर्मसम्मत रूप से करेगा, वह उसके लिए कल्याणकारी होगा।

उसमें उसकी जय निश्चित है। उसमें उसका कल्याण होगा और उसके इस स्वभाव को, उसके इस धर्मसम्मत स्वभाव की जो भी विरोधिता करेगा, उसका ध्वंस हो जाएगा।

जैसे ईश्वरोपासना और सम्मानपूर्वक जीने और रहने का अधिकार मनुष्य की धर्मसम्मत व्यवस्था है। इस प्रकार की धर्मसम्मत व्यवस्था में यदि कोई बाधा खड़ी करेगा, विरोध करेगा तो उसे ध्वंस होना ही पड़ेगा।

क्योंकि धर्म का विरोध करके कभी भी कोई न विजयी हुआ है और न होगा। इस कारण जब भी तुम लोग अपनी शक्ति के द्वारा चलोगे, दृढ़ पदविक्षेपण से चलोगे, सिर ऊंचा करके चलोगे, कारण याद रखोगे, जब धर्म तुम्हारे साथ होगा तो वह जो तुम्हारे विरुद्ध जाएगा उसका पतन अनिवार्य है।

पहल

ईरा सिंह

वृद्धावस्था है एक नयी शुरुआत

बर्ट्रेंड रसेल ने कहा था- ''अवकाश को बुद्धिमता के साथ भरने में समर्थ होना सभ्यता की अंतिम देन है। मुझे लगता है कि उनकी बात का इशारा यदि बुढ़ापे की तरफ है तो बात एकदम सटीक है। कोई भी पुस्तक बिना हाशिया के सुंदर नहीं होती और वृद्धावस्था का खालीपन वो ही हाशिया है।

ओशो जब शरीर छोड़ने के करीब थे वे बहुत शांत और ऊर्जा से भरपूर थे। उन्होंने न सिर्फ पूरे होश से आने वाले वक्त में किये जाने वाले कार्यों की रूपरेखा दी बल्कि अपने करीबी शिष्यों को दिये जाने वाले उपहारों की भी चर्चा की। फिर वे स्नानादि से निवृत्त होकर अपने पलंग पर लेट गये और उन्होंने अंतिम सांस छोड़ी। उनका व्यवहार ऐसा था जैसे वे लंबी छुट्टियां मनाने जा रहे हो। मुझे हमेशा आश्चर्य होता है क्या कोई व्यक्ति इस तरह भी दुनिया छोड़ सकता है। उन्होंने सालों तक जो प्रवचन दिये उसको खूबसूरत उदाहरण के साथ प्रस्तुत भी किया।

हरिवंश राय बच्चन की मधुशाला की ये पंक्तियां-

ज्ञात हुआ यम आने को है
ले अपनी काली हाला,
पंडित अपनी पोथी भुला
साधु भूल गया माला,
और पुजारी भूला पूजा,
ज्ञान सभी ज्ञानी भूला,
किन्तु न भूला मर के भी
पीने वाला मधुशाला।

यह कविता ओशो के वयोवृद्ध संन्यासियों पर खूब फलती है। कोई संदेह नहीं की ओशो के ध्यान की मधुशाला पीकर ये वयोवृद्ध संन्यासी दुनिया के सबसे खुशनसीब व प्रसन्नचित्त वृद्ध हैं। ऐसे प्रसन्नचित्त वृद्ध क्यूं नहीं हमारे समाज में देखने को मिलते? कहां चूक जाते हैं हम शायद इन पंक्तियों में इसका उत्तर भी है। कुछ बातें जो वृद्धावस्था को नए आयाम दे सकती है।

चाहे उम्र कुछ भी हो यदि जिंदगी को खूबसूरत बनाने का है तो बुढ़ापे के अंतिम पड़ाव पर भी व्यक्ति जवान बन सकता है। यदि हमारा दृष्टिकोण ऐसा है कि ''अब क्या अब तो बुढ़ापा है'' तो उस क्षण ही जीवन सिर्फ मौत का इंतजार भर रह जाता है।

जीवन का सौंदर्य उन लोगों को उपलब्ध होता है जो सक्रियता में विश्वास रखते हैं। जो भी कार्य आपको पसंद हो उसे अपने हाथों से करें। क्रिएटिविटी तुरंत अनुभव देती है और वो हमारे अंदर जीवन ऊर्जा को बहुगुणित कर देती है। नृत्य करने और नृत्य देखने में वही अंतर है जो सहयोगी और तमाशाबीन में है।

एक उम्र के बाद एक वृद्ध व्यक्ति से तथाकथित धार्मिक ढकोसलों में रमने की उम्मीद की जाती है जहां कथावाचक पुरानों को सुनाकर आपके स्वर्ग और नरक का फैसला करते हैं। युवा आध्यात्मिकता क्या है? जहां व्यक्ति स्वयं परस्पर कोशिश करता है। खुद को समझने और जानने की और यह उम्र सबसे बेहतर है। जहां हमारे पास अनुभवों का पिटारा है, सत्य की कसौटी को जांचने का।

ओशो एक सूत्र देते हैं वृद्धावस्था यानी गरिमापूर्ण व्यक्तित्व। इसका अर्थ है समझकर, विकसित होकर पीछे की चीजों को छोड़ते जाना। उम्र के बढ़ने का विकसित होने से कोई संबंध नहीं है। विकास तब होता है जब तुम अतीत को हर रोज, हर पल पीछे छोड़ते जाते हो। उस अतीत को विदा कर दो जो अब नहीं रहा। उससे बाहर निकल आये ताकि तुम ताजा रह सको, स्वच्छ रह सको।

अवकाश के बाद नया प्रेम प्रसंग यह बात हमारे समाज को ज्यादा जचेंगी नहीं परन्तु सत्य इससे बदलता भी तो नहीं। ओशो सुझाव देते हैं ''वृद्धावस्था में यह लोगों की इच्छा पर होना चाहिए कि पति-पत्नी साथ रहना चाहे या नहीं। यदि वे अलग होना चाहते हैं तो उन्हें सम्मानपूर्वक अलग हो जाना चाहिए ताकि अब वे नए सिरे से अपना जीवन शुरू कर सके और ये मनोवैज्ञानिक रूप से सिद्ध हो चुका है कि यदि कोई वृद्ध व्यक्ति किसी स्त्री के प्रेम में पड़ता है तो उसकी उम्र 10 साल बढ़ जाती है क्योंकि प्रेम तुम्हारी जड़ो को नया रस देता है। तुम फिर से युवा हो जाते हो।

वृद्ध वे हैं जो समय के साथ बदलना नहीं चाहते, वे समय को पीछे धकेलने में लगे हैं। आज का युग कम्प्यूटर युग है जहां जीवन हर क्षेत्र में तेजी से बदल रहा है। जीवनशैली से लेकर विचारधारा तेजी से परिवर्तित हो रही है और यदि हमारा रवैया नुक्ताचीनी करने का है तो हम कभी भी नए को आत्मसात नहीं कर पायेंगे।

हमारे देश में शिक्षा का केन्द्र बच्चे हैं। हम मानते हैं कि शिक्षा की जरूरत सिर्फ बच्चों को है लेकिन शिक्षा को किसी दायरे में बांधना सही नहीं है। शिक्षा मनुष्य का जीवन पर्यंत प्राप्त करने वाला अधिकार है। सीखने की सीमा नहीं होती और सच माने तो विद्यार्थी काल की शिक्षा हमारे कैरियर को संवारने का माध्यम है परन्तु वृद्धावस्था में शिक्षा सही रूपों में हमारे विकास में सहयोगी हो सकती है। हमें ऐसे विश्वविद्यालयों की जरूरत है जो विशेष रूप से वृद्धों के लिए कक्षाओं का आयोजन कर सके।

मन शरीर को प्रभावित करता है और शरीर मन को। इस प्रभाव से मानसिक रोग पैदा होते हैं। उनकी गहराई में जाएं तो पता चलेगा कि वे नकली हैं। ओशो की प्रज्ञा कुछ और देखती है। आदमी अपने शरीर के प्रति जितना होश से भरेगा, यंत्रवत नहीं जीयेगा उतना शरीर और मन के जोड़ में एक अंतराल पैदा होगा। यह अंतराल शरीर की जन्मजात नैसर्गिक प्रज्ञा को काम करने के लिए बेहद सहयोगी होगा। शरीर के यंत्र को हम जितनी सजगता से देख पायेंगे उतना हम उसके कामकाज में बाधा नहीं डालेंगे। शरीर बहुत समझदार है बनिस्पत मन के। हम अपनी दखलंदाजी छोड़ दे तो शरीर बहुत सहजता से स्वयं की रक्षा कर सकता है।

-334-ए, चित्रकूट नगर, भुवाना
उदयपुर-313004 (राजस्थान)

विनम्रता है, पैरों को नमस्कार करना

अनोखीलाल कोठारी

भक्तामर के प्रथम श्लोक में भगवान ऋषभदेव के चरणों में प्रणिपात है। आचार्य मानतुंग ने ऋषभ के चरणों में प्रणिपात क्यों किया? हमारे शरीर में उत्तम अंग है-मस्तिष्क, जो मस्तिष्क उत्तम अंग है उसको प्रणाम नहीं किया गया। पैर निम्न है, नीचे रहने वाले हैं, धरती को छूने वाले हैं उनको प्रणाम किया गया, ऐसा क्यों? होना चाहिए मस्तिष्क को प्रणाम और किया गया पैरों को। यह भारतीय चिंतन व संस्कृति की एक बहुत बड़ी विशेषता है।

प्रणाम उसको है जो धरती के साथ चलता है और धरती को छूता है। नमस्कार उसको किया जाता है जो मूल है। हम लोग पत्तों को देखते हैं, फूल और फल को देखते हैं, किन्तु जड़ को भुला देते हैं। यदि जड़ न हो तो पत्ते, फल और फूल कहां से होंगे? वृक्ष की शोभा जड़ ही है। पैर हमारे जीवन का आधार है इसलिए उसे प्रणाम किया गया है। जो आधार को छोड़कर उत्तम अंग को प्रणाम करता है वह शायद सच्चाई को भुला देता है। आधार है पैर, आधार है नींव! आधार है वह जड़, जो सारे वृक्ष को सिंचन देती है, पत्तों को सींचों, फूल को सींचों, पौधा सूख जायेगा। जब तक जड़ का सिंचन नहीं होगा कुछ भी नहीं होगा। पैर हमारा आधार है। पूरे शरीर की जड़ हैं हमारे पैर। जिन लोगों ने एक्यूप्रेशर को समझा है, वे जानते हैं कि हमारे पैर में कितनी ताकत है। मस्तिष्क के सारे केन्द्र हमारे पैर ही हैं। शरीर का हर अवयव हमारे पैर में है। पैर इतना शक्तिशाली है कि वह पूरे शरीर का प्रतिनिधित्व करता है।

जैनाचार्य इस विज्ञान को जानते थे। इसलिए पैरों की उपेक्षा नहीं की और नमस्कार की पद्धति पैरों के साथ जोड़ी। पैरों में नमन किया जाता है। कोई भी श्रद्धालु आयेगा, पैरों को छुयेगा और नमस्कार करेगा। गति पैरों के द्वारा होती है। यह पैरों का महत्व है। व्यक्ति अपने पूर्वजों का और महापुरुषों का अनुसरण करता है। उनके पदचिन्हों का अनुसरण करता है। वे पदचिन्ह अमित बन जाते हैं।

–ताम्बावती मार्ग, उदयपुर (राजस्थान)

वैज्ञानिक सोच के बावजूद

सुरेश पंडित

पचास-साठ वर्षों में वैज्ञानिक सोच और आलोचनात्मक विश्लेषण की प्रवृत्ति का जितनी तीव्रता और व्यापकता के साथ विकास हुआ है उतना उससे पहले किसी एक सदी में भी कभी नहीं हुआ। सारी दुनिया में सूचनाओं के आदान-प्रदान के लिये संचार माध्यमों की आम लोगों तक पहुंच बहुत बढ़ी है और ज्ञान-विज्ञान से सम्बन्धित जानकारियों का विपुल मात्रा में प्रचार-प्रसार भी हुआ है, परन्तु इतना होने के बावजूद हकीकत यह है कि आज भी हम चन्द निहित स्वार्थी लोगों द्वारा आरोपित सेंसर के भय से वस्तुस्थिति को सामने लाने से स्वयं को रोक लेते हैं। मिथकों से हमारा समाज इतनी बुरी तरह घिरा हुआ है कि भावुकता को यहां एक राजनैतिक संस्कृति के रूप में महिमामण्डित करने के लिये विशेष प्रयास करने की जरूरत ही नहीं पड़ती। लेखक, कलाकार और बुद्धिजीवी वर्गों को अक्सर जन-भावनाओं के आहत होने और आवेश में हिंसा पर उतारू हो जाने के भय दिखला कर उनको अपनी यथार्थपरक, तर्कसम्मत तथा पूर्णतया प्रमाण-आधारित रचनाओं को भी बदलने अथवा (तथाकथित) आपत्तिजनक अंश को हटाने के लिये बाध्य कर दिया जाता है।

गाय एक साक्षात् मंदिर

पुखराज सेठिया

भारतीय संस्कृति में गाय को माता का स्थान दिया गया है। जन्मदात्री माता तो अपनी संतान को 1-2 वर्ष ही दुग्धपान करवाती है किन्तु गाय जीवन भर दुग्ध पिलाकर हमारे शरीर को पुष्ट करती है। दुग्ध तो भैंस व बकरी भी देती है किन्तु इन तीनों के दूध की तुलना करने पर शरीर के उपयोगी तत्वों की दृष्टि से गाय का दुग्ध सर्वश्रेष्ठ है। गाय के दूध, दही व घृत में इतने गुण हैं कि आयुर्वेद में गोदुग्ध को रसायन बताया गया है। गाय के दूध से दही और दही से बनी छाछ के लिए कहा गया है–तक्रमेवामृतम् अर्थात् 'छाछ ही अमृत है।'

पंचगव्य गुणों की खान

गाय से मिलने वाले पंचगव्य (दूध, घी, दही, गोमूत्र एवं गोमय) गुणों की खान हैं। पंचगव्य विभिन्न बीमारियों को दूर करते हैं। नित्य प्रात:काल देसी गाय का करीब 50 मि.ली. गोमूत्र पीने वाला व्यक्ति स्वस्थ, कांतिमान व स्फूर्तिमान बनता है। गोमूत्र व गोबर कीटाणुनाशक होते हैं।

गाय एक साक्षात् मंदिर है। उसमें सभी देवता निवास करते हैं। घर में देसी गाय की उपस्थिति कष्ट व अमंगल को दूर रखती है। गाय के शरीर से निकलने वाली किरणें घर में कल्याण को फैलाती है। घर में गिरने वाला गोमूत्र व गोबर रोगाणुओं को नष्ट करते हैं। गोमूत्र व गोमय कृषि के लिए अत्यंत लाभकारी होते हैं।

देसी गाय का मूत्र चमत्कारी औषधि है। गुर्दो में खराबी में इससे जादुई सुधार होता है। खून में मिले कैरोटीन को यह नष्ट करता है। गोमूत्र में फॉस्फेट, पोटाश, लवण, नाइट्रोजन, यूरिया, अमोनिया, क्लरोइड आदि पोषक क्षार होते हैं। ये हृदय रोग, मस्तिष्क रोग, यकृत रोग, बवासीर, श्वास, मोटापा, रक्तचाप, मधुमेह, चर्मरोग, कफ, वातरोग आदि में लाभप्रद है।

परिचर्चा

डॉ. श्रीगोपाल काबरा

क्या इच्छामृत्यु मौलिक अधिकार है ?

हर सक्षम व्यक्ति को भरपूर मर्यादित जीवन जीने और व्यक्तिगत स्वतंत्रता का मौलिक अधिकार है। हर सक्षम व्यक्ति को अपने शरीर और जीवनशैली पर पूर्ण अधिकार है बशर्ते निर्णय तर्कसंगत हों, मानसिक क्षमता और स्वतंत्रता से लिए गये हों और वे किसी दूसरे के मौलिक अधिकारों और स्वतंत्रता को प्रभावित न करते हों। अमर्यादित जीवन जीने के लिये किसी को बाध्य नहीं किया जा सकता। उसे देह त्याग का अधिकार है। देह त्याग का निर्णय सोच समझ कर सुविवेक से लिया गया निर्णय होता है, जो व्यक्तिगत स्वतंत्रता के मौलिक अधिकार की श्रेणी में आता है। अपना अमर्यादित जीवन परिवार और समाज पर थोपना वे एक प्रकार की हिंसा मानते हैं।

तो क्या इच्छामृत्यु व्यक्ति का मौलिक अधिकार है?

नहीं। इच्छामृत्यु स्वयं में मौलिक अधिकार नहीं है। लेकिन अपने जीवन और शरीर के बारे में निर्णय लेने का उसे मौलिक अधिकार है, अगर ऐसे निर्णय के फलस्वरूप उसकी मृत्यु भी हो तो भी, बशर्ते कि यह निर्णय सक्षम व्यक्ति द्वारा सुविवेक से लिया गया स्वतंत्र निर्णय हो।

जैसे अगर मैं खाना न खाऊँ तो आप मुझे जबर्दस्ती नहीं खिला सकते। अगर मैं स्वेच्छा से, सोच विचार कर खाना छोड़ दूँ, यह जानते हुए कि ऐसा करने से मेरी मृत्यु हो जायेगी, और ऐसा करने की न आवश्यकता है और न बाध्यता, तो आप मुझे फोर्स फीड नहीं कर सकते। ऐसा करना शारीरिक आक्रमण होगा, व्यक्तिगत स्वतंत्रता का हनन व हिंसा होगी।

सवाल उठता है कि फिर अनशन करने वालों या भूख हड़ताल पर बैठने वालों को पकड़ कर फोर्स फीड क्यों करते हैं? क्या यह हिंसा नहीं है?

वे भूख हड़ताल या अनशन अपने शरीर के लिए नहीं करते वरन् दूसरे से अपनी बात मनवाने के लिए करते हैं। भूख हड़ताल अमर्यादित जीवन न जीने के लिये देह त्याग के समकक्ष नहीं है। दूसरों के विरुद्ध यह एक हथियार के रूप में प्रयोग किया जाता हैं। जिनके विरुद्ध इसका प्रयोग किया जाता है उनकी स्वतंत्रता को प्रभावित करता है। अत: यह विधि सम्मत नहीं है, मान्य नहीं है। भूख हड़ताल हिंसा नहीं है। इसका अधिकार व्यक्ति को है। लेकिन इससे मरने की धमकी के आगे न झुकना या उचित हो तो फोर्स फीड करना भी हिंसा नहीं माना जाता।

क्या संथारा, संलेखना द्वारा देहत्याग आत्महत्या नहीं है और कानून मान्य है?

संथारा आत्महत्या नहीं है कारण यह असंतुलित मानसिकता में आवेग या विषाद में लिया गया निर्णय नहीं है। धार्मिक आस्था में लिया गया निर्णय भी मान्य होता है। जैसे एक धार्मिक पंथ है, 'जे होवाज विटनेस'। उसके अनुयाई ट्रांसफ्यूजन नहीं करवाते, इसे वे अपने धर्म के विपरीत मानते हैं। ऐसे व्यक्ति को अगर ब्लड ट्रांसफ्यूजन की आवश्यकता हो और वह मना कर दे, यह बताने के बाद भी कि उसके बिना उसकी मृत्यु हो सकती है, हम उसे ब्लड ट्रांसफ्यूजन नहीं कर सकते। इसी प्रकार धर्म अनुयाइयों का संथारा का निर्णय लेकर खान-पान त्यागना उनका अधिकार है बशर्ते कि ऐसा निर्णय स्वतंत्र निर्णय हो और यह असंदिग्ध हो कि यह किसी प्रकार के प्रभाव या दबाव में लिया गया निर्णय नहीं है। धार्मिक आधार पर ही नहीं व्यक्तिगत स्वतंत्रता के आधार पर भी यह विधि सम्मत निर्णय है, कानून मान्य है। संथारा भूख हड़ताल या अनशन नहीं है।

जे होवाज विटनेस की मान्यता के आधार पर अगर कोई रोगी मरना चाहे तो उसकी मदद करना क्या चिकित्सक का दायित्व है? या मर्सी किलिंग का अधिकार चिकित्सक को है?

यह मर्सी किलिंग नहीं है। सवाल किसी को मारने या मरने में मदद का नहीं है। चिकित्सा में व्यक्ति-विशेष की स्वीकृति के बिना चिकित्सक कुछ नहीं कर सकते। अगर एक सक्षम व्यक्ति सोच समझ कर साफ तौर से मना कर दे तो उसके निर्णय के विपरीत उसके शरीर पर चिकित्सक कुछ नहीं कर सकते। बशर्ते कि उसका यह निर्णय यह जानने के बाद हो कि उसे क्या नुकसान हो सकता है। सक्षम व्यक्ति की स्वीकृति के विपरीत कुछ भी करना हिंसा की श्रेणी में आता है।

अगर रोगी निर्णय लेने की स्थिति में न हो तो निर्णय अभिभावक का होता है। अगर अभिभावक भी न हो तो चिकित्सक बिना स्वीकृति के भी इलाज कर सकता है बशर्ते कि निम्न चार परिस्थितियाँ हों।

1. रोगी स्वयं निर्णय लेने में सक्षम नहीं है।
2. कोई अभिभावक निर्णय लेने के लिए नहीं है।
3. रोगी की अवस्था गंभीर है।
4. उसकी जीवन रक्षा के लिए तुरंत कार्रवाही करना आवश्यक है।

यह स्थिति जीवन रक्षा के लिए है अत: सर्वथा अहिंसक है।

इच्छा मृत्यु और मर्सी किलिंग : इच्छा मृत्यु और मर्सी किलिंग में मौलिक भेद है। मर्सी किलिंग में मृत्यु की इच्छा तो व्यक्ति विशेष की होती है लेकिन उसको मारने का निर्णय और उपाय आपको करना है। उसे कर्म कर के मारना या मरने में सकर्म सहयोग करना मर्सी किलिंग है। यथा, उसे घातक इंजेक्शन लगा कर मारना है या घातक दवा या साधन उपलब्ध करना है जिससे वह मर सके। यहाँ मूल प्रश्न मरने के अधिकार का नहीं वरन् मारने वाले के अधिकार और दायित्व का है। कानूनन किसी को भी मारा नहीं जा सकता बिना निश्चित कानूनी प्रकिया को अपनाये। विदाउट ड्यू प्रासेस ऑफ ला।

किसी को मरने का अधिकार है का मतलब यह नहीं है कि उसको मारने का उत्तरदायित्व चिकित्सक का है। मारने का अधिकार तो कतई नहीं है। पहले मरने के अधिकार को देखें।

मारना, बतौर चिकित्सकीय प्रक्रिया, खतरनाक है जिसका घातक दुरुपयोग हो सकता है। चिकित्सक के लिए कुछ करके रोगी को मारने की प्रक्रिया के खिलाफ आग्रह तो समझा जा सकता है लेकिन निरर्थक और व्यर्थ की चिकित्सा कर एक मरणासन्न रोगी को जीवित रखना, जो वस्तुतः मृत्यु को लम्बा करना मात्र है, क्या उचित है? ऐसे में चिकित्सक को या चिकित्सकों के एक समूह को क्या निर्णय लेने का अधिकार नहीं देना चाहिए?

एक व्यक्ति है जो मानसिक रूप से सक्षम और संतुलित है और शारीरिक रूप से ऐसी व्याधि से ग्रस्त है जिसे वह अपनी राय में सार्थक जीवन, या मार्यादित जीवन जीने योग्य नहीं मानता। यथा एक व्यक्ति के दोनों गुर्दों ने काम करना बंद कर दिया है और वह डायालिसिस के सहारे जिंदा है। यह अन्त:स्थिति (टर्मिनल कंडीशन) नहीं है। वह मरणासन्न भी नहीं है। लेकिन जीने का सहारा डायालिसिस हटाते ही स्थिति मरणासन्न हो जाएगी। अगर ऐसा व्यक्ति पूरे होश हवास में यह निर्णय करता है कि उसकी डायालिसिस न की जाय तो क्या जबरन उसकी डायालिसिस करना उचित होगा? क्या डॉक्टर उसकी इच्छा के विपरीत ऐसा कर सकता है? अन्य एक व्यक्ति जिसका पूरा शरीर लकवाग्रस्त है और जो महज कृत्रिम श्वसन यंत्र के सहारे जिन्दा है, चाहता है, निर्णय करता है कि उसका श्वसन यंत्र हटा दिया जाये तो क्या जबरन कृत्रिम यंत्र चालू रखना उचित होगा? क्या किसी को जबरन जिंदा रखना विधि सम्मत है?

सक्षम रोगी का निर्णय विधि सम्मत है लेकिन उसको मारने की कार्रवाही को अंजाम देने वाला चिकित्सक होगा। क्या चिकित्सकों को इसकी वैधानिक छूट दी जानी चाहिए? ऐसी छूट के दुरुपयोग की संभावनाएँ काफी हैं। अत: अंतिम कर्म जिससे मृत्यु होगी वह चिकित्सक करे, यह उचित नहीं है। इसके विपरीत चिकित्सक ऐसे साधन उपलब्ध करा सकता है जिससे मरने की अंतिम क्रिया स्वयं व्यक्ति को करनी पड़े न कि चिकित्सक को। यह पेसिव यूथिनेशिया है। विश्व के मात्र कुछ देशों में यह मान्य है, भारत में नहीं।

यहाँ पर यह भी ध्यान देने योग्य है कि उपर्युक्त दोनों स्थितियों में डायालिसिस हटाने पर या वेंटीलेटर हटाने पर, व्यक्ति की मृत्यु बड़ी कष्टदायक और दर्दनाक होती है। शांत या सुखद मृत्यु नहीं। इसको दया मृत्यु की संज्ञा नहीं दी जा सकती। कानून सम्मत होने के बावजूद यह हिंसक कार्य होगा। तो क्या ऐसे केस में घातक इंजेक्शन देकर उसे सुख की नींद सुलाना एक चिकित्सक के लिए उचित नहीं होगा?

शायद उचित हो। सतही तौर पर अपने आप में सही लगता भी है। लेकिन मारने के निर्णय की छूट, मान्यता, या अधिकार चिकित्सक को देना, खास कर हमारे देश में जहाँ कोई भी चिकित्सा कर सकता है, 'डॉक्टर' बन सकता है, क्या उचित होगा? इसके दुरुपयोग की काफी संभावनायें हैं जो एक व्यापक हिंसा का रूप ले सकती है।

ब्रेन डैड (मृत मस्तिष्क)

इसके विपरीत एक ऐसा रोगी जो ब्रेन डैड है, ब्रेन स्टेम डैड है, जिसके अपने आप जीने के आसार नहीं हैं, जो केवल कृत्रिम श्वसन यंत्र के सहारे महज श्वास लेता रहेगा और इसी वजह से उसका हृदय चलता रहेगा, ऐसे व्यक्ति को महज श्वास लेने के लिये कृत्रिम श्वसन यंत्र पर रखना चिकित्सकीय कार्य नहीं हैं। महज इसलिए कि कोई इसके लिए खर्चा उठाने को तैयार है, यह चिकित्सा कर्म नहीं हो जाता। यह मृत व्यक्ति के प्रति हिंसा नहीं तो अमर्यादित कर्म अवश्य है।

वेजैटेटिव स्टेट

उपर्युक्त श्रेणी में वे रोगी नहीं आते जिनका सेरीब्रल कोर्टेक्स (उच्च स्तरीय मस्तिष्क) गंभीर रूप से क्षतिग्रस्त हो चुका है लेकिन ब्रेनस्टेम ठीक है, जो श्वास और हृदय का संचालन कर रहा है। ऐसा व्यक्ति संज्ञाहीन होता है लेकिन श्वास और हृदय की प्रक्रिया यथावत् होती है। इसको वेजीटेटिव स्टेट कहते हैं। ऐसे व्यक्ति को ट्यूब से खाना देकर लम्बे समय तक जिन्दा रखा जा सकता है। वह एक जीवित लाश के बतौर होगा। उसका संज्ञा ज्ञान कभी नहीं लौटेगा, कम से कम यथेष्ट संज्ञा ज्ञान तो कभी नहीं। उसकी ट्यूब हटाकर या ट्यूब से खाना देना बंद करने पर वह कुछ ही दिनों में मर जायेगा।

यूथिनेशिया, दया मृत्य

आखिर में वे रोगी जिनका रोग लाइलाज है, जिससे सीमित समयोपरांत या अल्प समय में मृत्यु होना विदित है, रोग ऐसी स्थिति में पहुँच गया जो अत्यंत कष्टदायक है और ऐसा व्यक्ति चाहता है कि उसे मौत की नींद सुला दिया जाये तो क्या उसके कष्ट निवारण के लिए मारना चिकित्सकीय कर्म होगा? यथा स्तन कैंसर जो हाथ को जाने वाली नब्ज तक पहुँच गया है और नब्ज को जकड़ने के कारण बड़ा कष्टदायक है। कैंसर स्वयं में अंत:स्थिति में नहीं पहुँचा है, लेकिन कष्टदायक है। मात्र कष्ट निवारण के लिए ऐसे व्यक्ति को मारने की स्वतंत्रता या अधिकार अगर चिकित्सकों को दिया गया तो रोगी की बेचारगी का लाभ उठाकर वे इसका दुरुपयोग करेंगे। पीड़ा कम करने की आज अनेक औषधियां हैं और अनेक विधियाँ हैं। पीड़ा निवारण होना चाहिए इसके लिए मनुष्य को मारने की स्वतंत्रता नहीं। मारना अचिकित्सकीय और अनैतिक कर्म है, हिंसा है।

इसलिये मारना, बतौर चिकित्सकीय प्रक्रिया, खतरनाक है जिसका घातक दुरुपयोग हो सकता है। चिकित्सक के लिए कुछ करके रोगी को मारने की प्रक्रिया के खिलाफ आग्रह तो समझा जा सकता है लेकिन निरर्थक और व्यर्थ की चिकित्सा कर एक मरणासन्न रोगी को जीवित रखना, जो वस्तुत: मृत्यु को लम्बा करना मात्र है, क्या उचित है? ऐसे में चिकित्सक को या चिकित्सकों के एक समूह को क्या निर्णय लेने का अधिकार नहीं देना चाहिए?

यह जटिल प्रश्न है। आइये इस पर भी विचार कर लें। मैं अपना केस बताता हूँ। मेरी माँ 80 वर्ष से ऊपर की थी। उनका कहना था वह अपना भरपूर जीवन जी चुकी हैं। उन्होंने मुझ से कहा, कि जब मेरा समय आये तब तू मुझे अस्पताल मत ले जाना और आई.सी.यू. में भर्ती कर मेरी दुर्गति मत करना। मेरा सर अपने गोड़े पर रख कर गीता पाठ करना।

यह हमारी संस्कृति के अनुरूप था। इसे आज की भाषा में अग्रिम आदेश या एडवान्स डायरेक्टिव या लिविंग विल कहते हैं। इसी प्रकार कोई गंभीर रोगग्रस्त व्यक्ति यथा जिसका हृदय काफी क्षतिग्रस्त हो चुका है, या जो लकवे से ग्रसित है अगर कहता है कि मेरी हृदय गति या श्वास गति रुक जाये तो मुझे वापस जिलाने की चेष्टा मत करना तो उसका ऐसा निर्णय बतौर अग्रिम आदेश मान्य होना चाहिए। यह इच्छा मृत्यु नहीं है। इसे आज की चिकित्सकीय भाषा में डू नोट रिसेसीटेट ओर्डर (डी. एन. आर.) कहते हैं। ऐसा निर्णय करने का अधिकार एक मानसिक रूप से सक्षम व्यक्ति को है। उसे न मानना अनैतिक है, हिंसा है।

लेकिन क्या एक चिकित्सक ऐसे डी. एन. आर. के अग्रिम आदेश दे सकता है? ऐसे अग्रिम आदेश वह तभी देगा जब उसे मालूम है कि रिसेसीटेट करना (वापस जिलाना) एक व्यर्थ की प्रक्रिया होगी कारण इससे उस रोगी को कोई सार्थक जीवन नहीं मिलने वाला। यथा एक रोगी जो गम्भीर मस्तिष्काघात के कारण भर्ती हुआ है, अगर ऐसे व्यक्ति को हृदयाघात होता है, या उसकी हृदय गति रुक जाती है तो क्या उसे कार्डियाक मेसाज देकर जीवित करना उचित होगा? या ऐसा रोगी जिसका कैंसर काफी फैल चुका है और अब मस्तिष्क में फैलने के कारण लकवा ग्रस्त होकर आया है, उसका श्वास या हृदय बन्द हो जाये तो क्या चेष्टा कर उसे जिलाना रोगी के प्रति उपकार होगा?

उच्चतम न्यायालय के आत्महत्या के प्रयास को अपराध मानने वाले निर्णय में ऐसे ही रोगियों की ओर इंगित किया है जहाँ ऐसा करना अपराध नहीं है। मरणासन्न व्यक्ति को मरने देना न मर्सी किलिंग है, न आत्महत्या में सहयोग और न ही किसी प्रकार का अपराध वरन् व्यर्थ की चिकित्सा अवश्य ही अनैतिक है, हिंसा है और अपराध भी।

-15 विजय नगर, डी-ब्लाक,
मालवीय नगर, जयपुर-302017
(राजस्थान)

सुप्रिया

गुणकारी औषधि है नींबू

हर जगह आसानी से उपलब्ध हो जाने वाला ऐसा फल है नींबू जो अपने रासायनिक गुणों के कारण फल कम किन्तु गुणकारी औषधि के रूप में अधिक जाना जाता है। नींबू पेट रोग निवारक, सौंदर्य प्रसाधक व नेत्र रोगनाशक है।

आंख शरीर का सबसे कोमल अंग है। धूप, धुआं, बरसात का गंदा पानी व लापरवाही के कारण आंखों में अनेक विकार उत्पन्न हो जाते हैं। स्वास्थ्य संगठन की ताजा रिपोर्ट के अनुसार विश्व में लगभग दो करोड़ स्त्री-पुरुष नेत्रहीन हैं। इनमें एक करोड़ बीस लाख दोनों आंखों से तथा अस्सी लाख एक आंख से है। विश्व के इन नेत्रहीनों में तीस प्रतिशत से अधिक नेत्रहीन भारतीय हैं। यह चिंताजनक है कि भारत में अधिक नेत्रहीन होने का बड़ा कारण हमारी लापरवाही है, जबकि जनसाधारण यह भी स्वीकार करता है कि आंख है तो जहां है।

शरीर की बनावट में यूं तो प्रत्येक अंग का अपना-अपना महत्व है। फिर भी आंख अधिक महत्वपूर्ण, बेशकीमती तथा कोमल है। लापरवाही को त्यागकर नींबू को औषधि के रूप में अपनाकर नेत्र रोगों से छुटकारा पाया जा सकता है।

● मोतियाबिंद की प्रारंभिक अवस्था में नींबू के रस को महीन कपड़े में छानकर बूंद-बूंद आंखों में डालने से बहुत अधिक लाभ होता है। आंखों की ज्योति में प्रभावकारी वृद्धि होती है।

● मोतिबाबिंद होने पर प्राय: ऑपरेशन किया जाता है। ऑपरेशन के लिए पहले इसके पकने की प्रतीक्षा की जाती है, क्योंकि इससे पूर्व ऑपरेशन नहीं किया जाता। मोतियाबिंद में नींबू के उपयोग से आश्चर्यजनक सफलता प्राप्त की जा सकती है। गाय के दूध से बने मक्खन को नींबू के रस में मिलाकर अच्छी तरह घोंट लें। जल मिलाकर पुन: इस मिश्रण को बीस दिन तक प्रतिदिन घोंटे। इसके बाद रात्रि में सोने से पूर्व सलाई से इस मिश्रण को लगाएं। थोड़े दिनों के नियमित प्रयोग से मोतियाबिंद से आंखों को निजात मिल जाएगी।

● छोटी कटेरी की जड़ को नींबू के रस में रगड़कर आंखों में लगाने से धुंध नष्ट हो जाती है।

● बारहसिंगा के सींग के बुरादे को नींबू के रस में डालकर खरल करके शुष्क चूर्ण बना लें। इस चूर्ण की बनी गोलियों को गुलाब जल में घिसकर आंखों में लगाने से जाला और धुंध नष्ट हो जाती है।

● धूप ताप के कारण आंखों में लाल हो जाने पर जमालघोटा की जड़ को नींबू के रस में पीसकर थोड़ी सी शुद्ध अफीम मिलाकर पलकों पर लगाने से लालिमा से छुटकारा मिलता है। लाल पड़ी आंखों में पीड़ा होने पर लोहे के बर्तन में नींबू के रस को तब तक घोटते रहें जब तक वह गाढ़ा न हो जाए। इसका लेप आंखों के बाहर करने से आंखों की पीड़ा में आराम मिलता है।

● नींबू के रस में एक हल्दी की गांठ डालकर रख दें। जब नींबू का रस सूख जाए तो चार बार नींबू का रस इस हल्दी की गांठ को पिला दें। इसके बाद हल्दी की गांठ को सुखाकर रख लें। इस हल्दी की गांठ को प्रतिदिन सुबह-शाम पानी में घिसकर आंखों में लगाने पर नेत्र दृष्टि तीव्र होती है और जाला तथा फूला कटकर साफ हो जाता है।

● नींबू से गुणकारी सुरमा बनाया जा सकता है। दस ग्राम काला सुरमा नींबू के रस में शुद्ध कर लें। इस सुरमें का खरल करके जितना बारीक हो सके कूट लें। इस प्रकार से प्राप्त सुरमा प्रतिदिन सलाई से आंखों में लगाने से आंखें निरोग रहती है।

–'विभावरी', जी-9,
सूर्यपुरम, नन्दनपुरा,
झांसी-284003 (म.प्र.)

स्वॉट (SWOT) मूल्यांकन

दिलीप भाटिया

ऐसे सवाल जो जिंदगी बदल दें

स्वॉट (SWOT) आत्मविश्लेषण की ऐसी कला है, जिसके जरिए हम अपनी ताकत, कमजोरियों, अवसरों और चुनौतियों के बारे में जान सकते हैं।

एक कागज को चार बराबर हिस्सों में बांट कर उनको एस (स्ट्रेन्थ) डब्ल्यू (वीकनेस), ओ (अपॉर्च्युनिटी) और टी (थ्रेट्स) का नाम दें। इन प्रश्नों के उत्तर विभाजित चार हिस्सों में लिखें-

एस (स्ट्रेन्थ)

❖ मेरे अंदर क्या कौशल और क्षमताएं हैं?
❖ मैं किन क्षेत्रों में कामयाबी पा सकता हूं?
❖ मेरा विलक्षण गुण क्या है?
❖ कौन से व्यक्तिगत गुण, मूल्य मुझे सफलता दिलायेंगे?

डब्ल्यू (वीकनेस)

❖ कौन से नकारात्मक विचार मेरे अन्दर है?
❖ मेरी क्षमताओं में किन चीजों की कमी है।
❖ मुझे कौन से कौशल हासिल करने हैं?
❖ मैं अपने जीवन के कौन से क्षेत्रों में सुधार कर सकता हूं?

ओ (अपॉर्च्युनिटी)

❖ मेरे लिए कौन से अवसर उपलब्ध हैं?
❖ कौन-सी परिस्थितियां मुझे मेरे लक्ष्य तक पहुंचने में सहायता करेंगी?
❖ कौन-से लोग मेरी सहायता और सहयोग कर सकते हैं?

टी (थ्रेट्स)

❖ मुझे किन बाधाओं का सामना करना है?
❖ कौन से विचार मेरे विकास में बाधक हैं?
❖ कौन से डरों ने मुझे जकड़ा हुआ है?
❖ कौन से लोग मेरी प्रगति में रुकावट पैदा कर सकते हैं?

-7, घ-12, जवाहर नगर
जयपुर-302004 (राजस्थान)

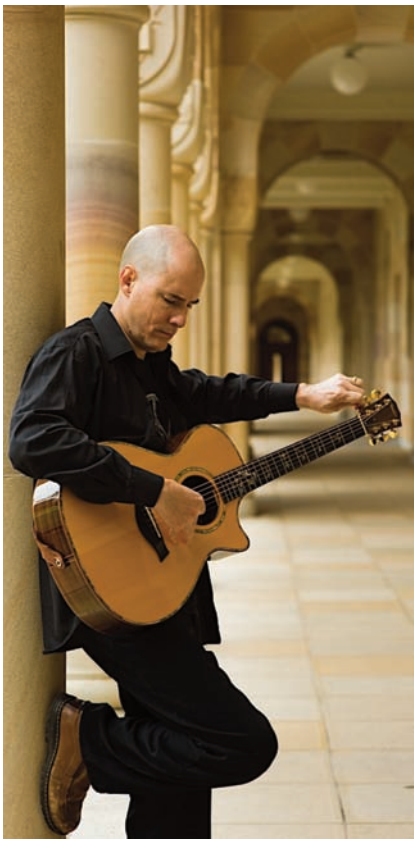

सलाह

रूपनारायण काबरा

जीवन जीने का चिंतन

इस जीवन में कुछ भी प्राप्त करने का, जीवन को सार्थक रूप में सफलता के साथ जीने का एक तरीका होता है, उसके पीछे एक सोच होती है, एक दिशाबोध और कुछ सूत्र होते हैं जिन्हें समझते, स्वीकारते, अपनाते हुए हम आसानी से अपने उद्देश्य में सफल हो जाते हैं। कुछ विशिष्ट सूत्र इस प्रकार है-

● परिस्थितियों से समझौता करो पर अपनी शख्सियत, अपनी पहचान, अपनी आत्मछवि खोकर नहीं, अपने लक्ष्य से भटक कर नहीं और अपने चरित्र से हटकर नहीं।

● स्पष्ट वक्ता बनो पर मुंहफट नहीं। आपकी स्पष्ट अभिव्यक्ति को मखमल में लिपटे हुए पेश होना है। अभिव्यक्ति के परिवेश एवं प्रस्तुति को शालीन तो होना ही है।

● साहसी बनो पर विद्रोही नहीं। विद्रोह तो हर किसी को अस्वीकार ही होता है। आपका सही प्रतिरोध भी स्वीकार्य नहीं होता है। व्यवहार में अक्खड़पन और अकड़ उचित नहीं, सौम्यता, शालीनता एवं मृदुलता ही उचित है।

● सख्त परिश्रम में लक्ष्यदृष्टि, नियमितता और निरंतरता नहीं हो तो परिणाम आशा के अनुकूल नहीं होंगे। जैसे कि विद्यार्थी के लिए नियमित छह घंटे की पढ़ाई उत्तम है पर दो दिन 12-13 घंटे पढ़ना और खाना तथा विश्राम का ध्यान नहीं रखना, हास-परिहास, मनोरंजन से दूर रहना इत्यादि हमें सुखद और सही सफलता नहीं प्राप्त करने देते।

● कम से कम किसी एक कार्य में, विषय में अथवा कौशल में विशेष निपुणता प्राप्त कर लें पर आपके खुलेपन को कुप्रभावित नहीं होना है, संकीर्णता न आने पावे और परिप्रेक्ष्य से संपर्क-संबंध न टूटने पावे। प्राय: ऐसा होता है कि एक में निष्णात होने पर अन्य से कट जाते हैं।

● लिखने और बोलने में अभिव्यक्ति का विकास आवश्यक है लेकिन आपकी अभिव्यक्ति को शब्दों के बोझ तले दब नहीं जाना है। शब्दों को अभिव्यक्ति का अनुगामी अनुचर ही रहने दें, स्वामी नहीं बनने दें।

● मूल तत्व एवं विवरण-विस्तार में भेद करें। मूल-तत्वों पर अर्थात् विषय-बिन्दु पर ध्यान दें पर विवरण की अवहेलना भी नहीं। आवश्यकतानुसार संतुलन के साथ ही दोनों का प्रयोग करें।

● स्वयं में आस्था एवं मानव मात्र में विश्वास रखें पर ध्यान रहे कि आप भोले बनकर लोगों की ठगी के शिकार न हो जाएं और आत्मविश्वास से संपूरित होकर अहमन्यता एवं अहंकार से ग्रस्त न हो जावें।

● क्षमाशील बनें। घृणा अमानवीय है, प्रेम दिव्य है। क्षमा और प्रेम में परस्पर सहज संबंध है, जो पोषक है। घृणा और क्रोध शोषक हैं, नाशक हैं। 'क्षमा करो और भूल जाओ', यह कायरता नहीं, विशालता है, मानवता है और आंतरिक शांति प्रदान करती है। क्षमा करके हम हंस सकते हैं। शेक्सपियर कहते हैं- ''क्रोध मेरा मांस है और जब मैं क्रोध करता हूं अपने स्वयं के मांस को खाता हूं।'' क्षमा एवं अक्रोध शरीर और आत्मा दोनों के लिए ही अच्छे हैं। क्षमा प्रत्येक के लिए सहज नहीं, इसके लिए दृढ़ प्रयास आवश्यक है क्योंकि हमारा अहं इसमें बाधक होता है। क्षमा नहीं कर पा सकना ही क्रोध एवं प्रतिशोध जगाता है। क्षमाशील बनें। यह स्वयं आपके लिए तथा औरों के लिए, सभी के लिए अच्छा है।

● आगे बढ़ने के लिए प्रतिस्पर्द्धा की भावना आवश्यक है पर प्रतिस्पर्द्धा औरों से न करके स्वयं से करें। कल कहां थे और आगामी कल तक कहां तक पहुंचने का लक्ष्य है इसी पर ध्यान केन्द्रित करें। यदि दूसरों से तुलना करेंगे तो बहुत कुछ पाकर भी असंतुष्ट ही रहेंगे। आगे निकलने वालों से ईर्ष्या-द्वेष भी होगा, उनका बुरा भी चाहेंगे। याद रखिए, दूसरों से की गई प्रतिस्पर्द्धा पवित्र नहीं हो सकती। दूसरे से आगे निकलने के लिए कुछ भी गलत करना सहज है, स्वाभाविक है, मानवीय कमजोरी है। हमेशा इसी की तैयारी करें कि आपका अपना आगामी कल आज से बेहतर होगा। अपने से तुलना करने में आप कुंठा अथवा हीनभावना से ग्रसित नहीं होंगे और थोड़ी-थोड़ी उपलब्धि भी अधिक प्रसन्नता देगी।

● सफलता जीवन पर्यंत चलने वाली सतत प्रक्रिया है, यह तो सीखने की प्रक्रिया है। सीखना दूसरों से, सीखना असफलताओं से और सीखना होता है स्वयं करके। यह नहीं सोचना है कि जो कुछ मुझे आता है वह बहुत है। जो ज्ञान और योग्यता आज है कल के लिए पर्याप्त नहीं होगी। इसीलिए सीखते रहने की बात बनानी होगी। जो सीखते रहते हैं वही बढ़ते रहते हैं।

● याद रखिए जीवन की दौड़ में गिरना और उठना जीतने की ओर बढ़ना है। गिरने पर अफसोस करके मन में गिरावट लाना गलत है। गिरना भी उतना ही सत्य है जितना कि उठना। यदि साहस और आत्मविश्वास बनाये रखें तो गिरना और अधिक ऊंचा उठना सीखा जाता है। अब्राहम लिंकन ने जितनी असफलताएं देखी उतनी शायद ही किसी ने देखी है पर उस जैसी उच्चतम सफलता भी विरले ही देख पाते हैं।

● जीवन का एक सिद्धांत है कि संघर्ष एवं संकट पहले है, कठिनाई पहले है, उसके सुखद परिणाम तो बाद में ही आते हैं। वर्षा के पूर्व समुद्र को और धरती को तपना ही होता है और तब जाकर आती है अमृतमयी, सुखद और शीतल वर्षा।

● हम अतीत को बदल नहीं सकते और जो होना है वह होगा, अपरिहार्य एवं अनिवार्य को रोक नहीं सकते। बस हम यही कर सकते हैं कि अपना दृष्टिकोण सकारात्मक बनाये रखें।

● एक बात और याद रखिये कि यदि महत्वाकांक्षा को स्वयं तक ही सीमित रखेंगे, निरपेक्ष रखेंगे तो सुखी रहेंगे। इसे सापेक्ष मत होने दीजिए। यह मत सोचिए कि लोग किस ऊंचाई तक पहुंच रहे हैं, आप तो बस अपने को हराते चलिए। अपने ही पिछले रिकार्ड तोड़ते चलें, आगे बढ़ते चलें, यही सच्ची सफलता है, यही शुद्ध महत्वाकांक्षा है और यही सही है और सुख देने वाली है।

● स्वयं में, अपने कर्म में और ईश्वर में आस्था आपकी बैटरी को चार्ज करते रहने के लिए आवश्यक है। आध्यात्मिक चिंतन, प्रकृति से प्रेम, सद्ग्रंथों का स्वाध्याय, क्षमा और सेवा जीवन के लिए अमृत है। सुख का रास्ता है दूसरों के लिए जीना और इस आस्था से कि ''अच्छा है कुछ ले जाने से, देकर ही कुछ जाना।''

-ए-438, किशोर कुटीर, वैशाली नगर
जयपुर-302021 (राजस्थान)

Cow stands for religious values and also economic wellness

Gani Rajendra Vijay

All of Jain philosophy and ethics can be explained in one word—Ahimsa. Indeed, the Jain dharma has perfected nonviolence not only in action, but in thoughts and ideas as well. The Jain way of life is a perfect exposition of the ancient Sanskrit saying: Ahimsa paramo dharmaha, ahimsa is the supreme religion. Cow protection and Jeev Daya is a unique form of non-violence followed by the Jain community under the eternal guidance of Guru Vallabh and Guru Indra.

A natural corollary to nonviolence is Jiva daya or compassion towards all, the importance of which cannot be emphasized in today's 'eye-for-an-eye' world. Noted scholar Dr. L.M Singhvi says in The Jain Declaration on Nature: that it is the intention to harm, the absence of compassion that makes an action violent. Without violent thought there could be no violent action. Lord Mahavir said you are that which you intend, to hit, injure, insult, torment, persecute, torture, enslave or kill."

Ahimsa or nonviolence is not only non-killing, it also means that one's attitude must be of maitri (amity) and peace. The real meaning of ahimsa is maitri. There are countless jivas, life or life forms, that populate the earth, air, water and are present all around us. How are we to behave towards these? With maitri.

A beautiful example of this jiva daya is Sukhi Parivar Jeevdaya Goshala at Bald Goan in district Barodara in Gujarat.

Ahimsa and jiva daya have made Jains great environmental conservationists. Eco-friendliness is interwoven into their day-to-day living and is based on a feeling of being trustees of the earth. We are like the vanavasis or tribals, We exist in harmony with the earth. The earth takes care of us, and so we take care of her. Man has polluted the earth because he thinks of her as a possession.

An attitude of reverence towards the earth, air, water and animals stems from the Jain belief that everywhere exist beings in different forms and in various stages of spiritual evolution. So if I cut a tree, or hurt a cow, I have killed a jiva (life) and therefore caused violence.

In Sanskrit the word Goshala literally means cow protection or the place where cows are sheltered. Other Sanskrit names for the cow are Go-mata (mother cow), Kamadhenu (wish fulfilling), and Aghnya (never to be killed).

Saints and Sages have chosen the names for the cow in Sanskrit literature in ancient times that were aware of the intrinsic role which the cow plays in the greater scheme of nature and particularly in relation to the wellbeing of human society.

The foremost name for the cow in India is Go-mata or Mother Cow. The wise men in ancient India considered that the human being has seven mothers; the mother who gave us birth, the mid-wife, the wife of the King, the wife of a priest, the wife of our teacher, the Earth, and the holy cow.

Most human beings come in contact with the above seven mothers during the course of life and benefit greatly from them. Therefore, Indian culture requires that these seven mothers always be given respect and protection. You would not kill your 'Mother' - similarly you should not kill the sacred cow.

Of course the seven mothers are not all put on the same level in terms of practical dealings and the cow is certainly not worshipped as superior to ones birth mother, as those who are antagonistic to Indian culture sometimes suggest. But because all respectable persons, objects, or beings are to be worshipped, there is a day reserved in the year where the followers of Indian culture worship the cow with decorations and various types of offerings. That day is called Go-puja or the day for worshipping the cow. Go-puja is especially observed in rural India where people live their lives and depend greatly on the cows and bulls.

Some western critics have condemned the worship of the cow in India but this is due to mainly because of their lack of understanding the Indian values. Cultural and religious extremes often make it difficult for one person to understand another. For example, in some western countries a day is set aside each year called Mother's Day on which loved ones offer gifts and take 'Mom' out to dinner. Because the children or the spouse appreciates and loves 'Mom" they show that on a special day and perform activities that actually constitute worship and respect.

Bhishma said: One should never feel any repugnance for the urine and the dung of the cow. One should never show any disregard for cows in any way. If evil dreams are seen, men should take the names of cows. One should never obstruct cows in any way. Every morning, people should bow with reverence unto cows. Cows are sacred. They are the foremost of all things in the world. They are verily the refuge of the universe. They are the mothers of the every deities. They are incomparable. Cows are the mothers of the universe. There is no gift more sacred than the gift of cows. There is no gift that produces more blessed merit. [From the Mahabharata, Anusasana Parva, Sections LXXXIII - LXXVII - LXXVI]

Even Islamic scholars aver that Islam gives no compulsive directive for killing of cows either for religious or mundane purposes. The British shrewdly foisted this issue. They were beefeaters and had no compunctions about killing cows to meet their taste. To their pleasant surprise, they found they could co-opt the Muslims into that category and widen the latter's gulf with the Hindus. The first War of Independence in 1857 erupted as a sepoy mutiny, when an Indian section of the British army refused to teeth cartridges supposedly made from cow/pork fat. Its extreme manifestation was a Brahmin soldier Mangal Pandey, who shot dead Sergeant Wheeler, thus beginning the uprising prematurely.

Bahadur Shah 'Zafar', after regaining Delhi in 1857 for a brief interlude, made the killing of cow a capital offence. Bahadur Shah was not the first Mughal king to make such a proclamation. Babar may have been an ardent Ghazi of Islam, but he, in his letter dated 935 Hijri, advocated his son Humayun to stop cow slaughter in India. As recorded in his famous firman of 1586, Akbar too completely forbade cow slaughter throughout his empire. Then Emperor Jehangir promulgated an order that on Sundays, when Akbar was born, and Thursdays, when Jehangir ascended to the throne, no animal should be sacrificed. Even bigoted Aurangzeb always refrained from making cow-sacrifice during Bakr-Id. In Maharaja Ranjit Singh's kingdom the only crime that had capital punishment was cow slaughter.

Religious and cultural sentiments associated with cow are too well known to bear repetition. But its economic and ecological aspects elude these second-hand Western-minders. In an agrarian country like India, bovine population was considered an asset and an index of prosperity. While cows yielded milk, oxen tilled in the fields or drew carts. India's voice has been one of peaceful co-existence with flora, fauna and rest of humankind. There was an inclination towards complete vegetarianism as reflected in Jainism and Buddhism. Since these philosophies put their faith in transmigration of soul, they desisted from animal slaughter since an animal was also a Buddha in the making. And cow was a mother-animal by every conceivable standard for them. ■

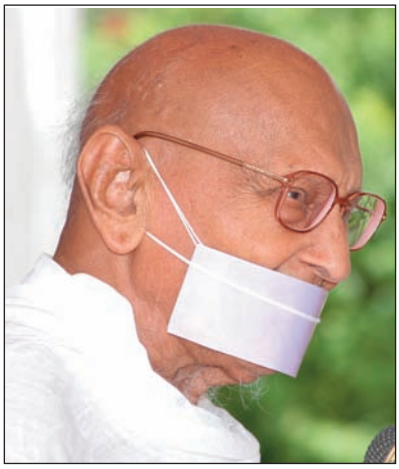

Acharya Mahaprajna

Health & Happiness

The cause of illness does not lie only in the body but also in an unhealthy mind... Many diseases descend from the mind. They are not only physical ailments, but are psychosomatic.

The cause of psychosomatic ailments is found in the internal world - the world of the psyche. Freud has used the word 'mind'. Jung did very subtle studies in the field of psychology. He explained that our consciousness has two levels: mind and psyche (consciousness). Psyche is beyond mind. Numerous ailments emerge from the psyche, the world of emotions. Both the terms 'healthy' and 'unhealthy' are related to the emotional world.

A person gets very angry. As soon as the intensity of anger increases, the heart is stimulated and its beats become faster. Anger is the enemy of the heart. When anger crosses its limits, it damages the functioning of the heart.

The growth of fear disturbs the functions of the heart, the lungs and the kidneys. Some ask why their kidneys malfunction when they neither consume excess salt nor spicy food. Our emotional world is a subtler cause than our food. If a person is frightened, fear leads to malfunctioning of the kidneys.

Our emotions affect the functioning of the organs of our body, and our organs affect our emotions. The two are intertwined. If any part of our body is diseased, it has a direct effect on the emotional status of the person. When a person's liver is infected, he will become quarrelsome. There is no medication for removing quarrelsome traits.

But analysing from the perspective of emotions, a person with a quarrelsome nature should get his liver diagnosed. Malfunctioning of the liver can also lead to depression without any apparent reason.

From the standpoint of Preksha meditation, while discussing the causes of good health and sickness, we should not get stuck only on the external causes. Of course, the causes could be external. But we should also be aware of each and every organ of our body and see what is going on there.

Whenever there is turbulence in our emotions, we should find out how our body is functioning. Similarly, when the parts of our body are malfunctioning, we should crosscheck how our emotions are. Both of them are interconnected. It is necessary for the trainers of Preksha meditation to know this fact.

The principle of Preksha meditation is that balanced emotions lead to a healthy body and unbalanced emotions lead to an unhealthy body. Unbalanced emotions make a person unhealthy and an unhealthy body will trigger the emotions. ■

Maulana Wahiddudin Khan

It's good to forget

Irish playwright Bernard Shaw once said that the most uneducated person was the one who had nothing to forget. This is a shrewd and important observation. Every day people face negative experiences. Whether of greater or lesser import, people generally like to dwell on these negative experiences. Once this becomes a habit, it has a negative effect. Then unpleasant experiences become a part of their active memory, till it becomes a jungle of negativity. So it is best to forget these kinds of sad events. In your case, whatever happened was beyond your control, but it is in your hands to forget it and prevent it from becoming a part of your memory.

If others are not ready to take your advice on this, you had better become its first follower. What is education? Education is not just the means of making you a degree holder; it is the gateway to the art of living. Education enables you to think, to discover the principles of life, and to correctly evaluate your experiences. Education gives you the ability to know the difference between the achievable and the unachievable.

If you are an educated person in this sense, you will certainly discover the value of the habit of forgetting.

The choice in this context is not between forgetting and not forgetting: the real choice is between living with all kinds of bitter memories and totally freeing yourself from them. Try to forget unpleasant memories, for the alternative to this is living in bitterness and that is not a good choice for anyone. The habit -- of forgetting -- leads you to many good things. It saves you from distraction, it economises your energy, it prevents you from wasting your time, and it shields you from negative thoughts.

All these things are so important for a better life that any sacrifice to achieve it is certainly worth it. In life your share is only fifty per cent. The rest of the fifty per cent is supplied by others. Living with bitter memories means that you are not ready to accept this law of nature. You cannot change the law of nature, so change yourself. This will give you the gift of a comfortable life in every situation. If you are not ready to forget what is forgettable, then after some time you will become addicted to this habit.

Bitter memory is fed by bad experiences and so you tend to recall them every day. This is a very bad sign. This will create a permanent obstacle to the development of your personality. Of the two kinds of memories, good and bad, the former gives you energy, while the latter ruins your life. You have to appreciate this difference and try to live with good memories and forget the bad memories. This habit will help you achieve a good human life. Memory is an integral part of your mind. There is no escape from memory.

The only option is to try not to make memory a part of your conscious mind, but relegate it to the unconscious mind. And the forgetting habit serves that very purpose. We cannot delete our memory from our minds, but we can make it ineffective by storing it in the memory archives. Memory when good is a positive guide, and when bad, totally negative. You have to control your memory rather than be controlled by it. Make your memory your intellectual storehouse and not the master of your daily conduct. ■

सीख

संदीप कपूर

कहां खो गई दादा-दादी की कहानी

बचपन में स्कूल की छुट्टियों में ननिहाल जाने पर मेरी नानी हम सब बच्चों को अपने पास बिठाकर मजेदार कहानियां सुनाया करती थी। उनकी कहानियों का विषय राजा, राजकुमार, राजकुमारी व दुष्ट जादूगर हुआ करते थे। अकबर-बीरबल व विक्रम-बेताल के किस्से हमें अपने साथ बांधे रखते थे। कभी-कभार नानी हमें भारत विभाजन के दौरान पाकिस्तान से भारत आने के दौरान हुए मुश्किलों भरे सफर की जानकारी भी तफसील से देती, जो उस समय हमारे लिए रोचक किस्सों से कम नहीं होता था। आज नानी नहीं रही, लेकिन दिमाग पर जोर डालते ही उसके किस्से-कहानियां ताजा हो उठती हैं। मेरी तरह वे सभी लोग खुशनसीब होंगे जिन्हें बचपन में अपने दादा-दादी, नाना-नानी के साथ इस तरह की बैठकों का अनुभव होगा।

कुछ दशक पहले ही बच्चों में कॉमिक्स बेहद लोकप्रिय थीं। इन कॉमिक्स के पात्रों में फैंटम, चाचा चौधरी, लम्बू-मोटू, राजन-इकबाल, फौलादी सिंह, महाबली शाका, ताऊजी, चाचा-भतीजा, जादूगर मैंड्रक, बिल्लू, अंकुर, पिंकी, रमन, क्रुकबांड सरीखे तमाम पात्र बच्चों को अपने ही परिवेश के प्रतीत होते थे। जो उनमें फैंटसी के अलावा रोमांच, चतुराई उभारते हुए उनकी कल्पनाशक्ति विकसित करते थे। अमर चित्रकथा ने भारतीय संस्कृति पर कॉमिक रचकर बच्चों का अपार ज्ञानवर्धन किया।

इतना ही नहीं किशोरों के लिए साहस, रोमांच व ज्ञान से भरपूर पॉकेट बुक्स भी प्रकाशित की गई। अस्सी-नब्बे के दशक में पॉकेट बुक्स का जादू भी बाल पाठकों के दिलोदिमाग पर छाया रहा। डायमंड, मनोज, राजा, शकुन, पवन, साधना पॉकेट बुक्स के अलावा अन्य जाने-माने प्रकाशनों ने बच्चों के लिए भरपूर छोटे उपन्यास प्रकाशित किए। उस समय बच्चों में भी यह क्रेज रहता था कि उन्होंने अपने पसंदीदा पात्रों की पॉकेट बुक्स पढ़ी या नहीं। बच्चे आपस में अदल-बदल कर अपनी पसंदीदा किताबें पढ़ने से नहीं चूकते थे।

बालरुचि के अनुरूप ही मधु मुस्कान, लोटपोट, पराग, टिंकल, नंदन, बालमेला, चंपक, चंदामामा, चकमक, हंसती दुनिया, बालहंस, बाल सेतु, बाल वाटिका, नन्हे सम्राट, देवपुत्र, लल्लू जगधर, बालक, सुमन सौरभ जैसी बाल-पत्रिकाएं भी प्रकाशित हुई, जिनमें से कुछ आज भी बाल पाठकों को लुभा रही हैं। सरकारी तौर पर भी नन्हें तारे, बाल वाणी जैसी बाल-पत्रिकाएं शुरू की गई जो काल कलवित हो गई। अलबत्ता प्रकाशन विभाग की बाल भारती व नेशनल बुक ट्रस्ट की पाठक मंच बुलेटिन आज भी नियमित प्रकाशित हो रही हैं। यदि केन्द्र सरकार तथा राज्य सरकारें बाल-साहित्य प्रकाशन व प्रोत्साहन की दिशा में गंभीरता से रुचि ले तो यह भावी नागरिकों के हित में एक अच्छा कदम होगा।

दैनिक समाचार-पत्रों में भी अपने बाल-पाठकों को खास ख्याल रखते हुए प्रायः रविवारीय विशेषांक में बाल-साहित्य को प्रमुखता से स्थान दिया जाता था। परन्तु बाजारवाद के मौजूदा दौर में बाल साहित्य अब केवल औपचारिकता बनकर रह गया है तथा सृजनात्मक साहित्य के स्थान पर बच्चों को ज्यादातर इंटरनेट की सामग्री परोसी जा रही है। रोचक-मजेदार बाल कथाओं का तो अब अभाव हो चला है। यही नहीं बाल-साहित्यकार भी खुद को उपेक्षित महसूस करते हुए साहित्य की अन्य विधाओं की ओर उन्मुख होते जा रहे हैं। यह स्थिति बाल-साहित्य के लिए बेहद घातक है।

दूसरी तरफ आज के व्यस्तता भरे समय में जहां भौतिकवाद ने रिश्तों में दूरियां बना दी हैं, वहीं टेलीविजन तथा कम्प्यूटर ने बचपन को एक तरह से लील लिया है। मनोरंजन के नाम पर बच्चों के पास वीडियो गेम, कम्प्यूटर, इंटरनेट, केबल टीवी से लेकर मोबाइल जैसे तमाम उपकरण भले ही आ गए हों पर इनमें से कोई भी उन्हें स्वस्थ मनोरंजन दे पाने में सक्षम नहीं। वैज्ञानिक शोधों से पता चला है कि इंटरनेट, टीवी व वीडियो गेम बच्चों में तनाव, हिंसा, कुंठा व मनोरोगों को जन्म दे रहा है। इन उपकरणों से जुड़े रहने वाले बच्चों की आंखों पर मोटे-मोटे चश्मे भी देखे जा सकते हैं। पश्चिमी संस्कृति से प्रेरित कार्टून फिल्में व अन्य डब किए गए कार्यक्रम बाल सुलभ मन में अश्लीलता व विकारों के बीज बो रहे हैं। उनकी भाषा भी व्यवहार की तरह संस्कारविहीन होती जा रही है।

अभिभावकों को भी बच्चों पर पढ़ाई का बोझ न लादते हुए कुछ समय स्वाध्याय के लिए प्रेरित करना चाहिए। साहित्य पठन के इन पलों में बच्चों का स्वस्थ मनोरंजन होने के साथ ही उनमें मानवीय गुण तो विकसित होंगे ही, एकाग्रता व शिक्षा के प्रति रुझान भी बढ़ेगा।

इस परिस्थिति में बच्चों में नैतिकता, शिष्टाचार, ईमानदारी सहित अन्य सद्गुणों के विकास की कल्पना भी नहीं की जा सकती। इसलिए जरूरी है कि हम सब बाल-साहित्य की प्रासंगिकता व उपादेयता को समझते हुए उसे बाल-जीवन में स्थान दें। बच्चों को संस्कारवान बनाने में गीताप्रेस-गोरखपुर का बाल साहित्य व अमर चित्रकथा बेजोड़ है। बाल साहित्यकारों को एक चुनौती की तरह भारतीय आधुनिक परिवेश के हिसाब से अपने साहित्य को विकसित करना चाहिए। अभिभावकों को भी बच्चों पर पढ़ाई का बोझ न लादते हुए कुछ समय स्वाध्याय के लिए प्रेरित करना चाहिए। साहित्य पठन के इन पलों में बच्चों का स्वस्थ मनोरंजन होने के साथ ही उनमें मानवीय गुण तो विकसित होंगे ही, एकाग्रता व शिक्षा के प्रति रूझान भी बढ़ेगा।

-88/1395, बलदेव नगर
अंबाला सिटी-134007 (हरियाणा)

समृद्ध सुखी परिवार

सुखी और समृद्ध परिवार का मुखपत्र

विज्ञापन और सदस्य बनाने हेतु प्रतिनिधि संपर्क करें

पत्रिका के स्वयं ग्राहक बनें, परिचितों, मित्रों को ग्राहक बनने के लिए प्रेरित करें

कवर अंतिम पृष्ठ	25,000
कवर द्वितीय/तृतीय	20,000
भीतरी रंगीन पृष्ठ	10,000

वार्षिक शुल्क
300 रुपये
दस वर्ष
2100 रुपये
आजीवन
3100 रुपये

विज्ञापन देकर अपने प्रतिष्ठान को जन-जन तक पहुंचाएं

कृपया निम्नलिखित विवरण के अनुसार मुझे 'समृद्ध सुखी परिवार' सदस्यता सूची में शामिल करें:

नाम.....

पता.....

.....

फोन..... ई-मेल.....

सदस्यता अवधि.....राशि रुपए..... द्वारा मनीऑर्डर/बैंक ड्राफ्ट संख्या.....

दिनांक..... .....

आवेदक के हस्ताक्षर

नोट: सदस्यता शुल्क की राशि का चेक/ड्राफ्ट **सुखी परिवार फाउंडेशन, नई दिल्ली** के नाम से बनाएं या एक्सिस बैंक खाता संख्या 119010100184519 में सीधा जमा करवाएं। मनी ट्रान्सफर के लिए **IFS CODE UTIB0000119** का प्रयोग करें।

सुखी परिवार फाउंडेशन

टीएसडब्ल्यू सेंटर, ए-41/ए, रोड नंबर-1, महिपालपुर चौक, नई दिल्ली-110 037

फोन: +91-11-26782036, 26782037, मोबाइल: 09811051133

ललित गर्ग

मणिभद्र साधना

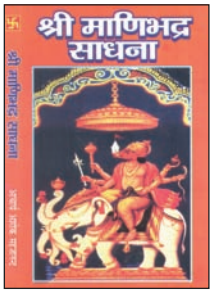

जैन शासन में श्री मणिभद्रजी की साधना का विशेष प्रचलन है। ऐसा माना जाता है कि मनोकामनाओं की पूर्ति में इनकी साधना-उपासना बड़ी प्रभावी रहती है। पर इनका साहित्य दुर्लभ है। प्राचीन पाण्डुलिपियों के गहन अध्ययन- मनन-अनुशीलन के आधार पर प्रथम बार 'मणिभद्र साधना' रूपी नवनीत आचार्य अशोक सहजानंद ने उपलब्ध कराया है। जिसके लिए वे निश्चय ही अभिवंदना के पात्र हैं।

पुस्तक के 'प्राक्' के अंतर्गत् साधना के गणित को समझाते हुए विद्वान लेखक का मानना है-

''वर्तमान युग में तंत्र-मंत्र की शक्ति का सबसे ज्यादा दुरुपयोग हो रहा है। दूसरों का अनिष्ट करना मानो एक व्यवसाय बन गया है। वे लोग मानवजाति का भला नहीं कर सकते, जो अपनी शक्ति का दुरुपयोग करते हैं, कर रहे हैं।

आज के परिप्रेक्ष्य में ऐसे दुष्कर्मों से बचाव एवं अपनी सुरक्षा के लिए मणिभद्र व घंटाकर्ण की साधना बहुत प्रभावी है।''

पुस्तक में विद्वान लेखक ने मणिभद्र के जीवन परिचय के साथ उनके स्थान का पूर्ण परिचय उसके इतिहास के साथ दिया है। मणिभद्रजी की मंगल-पूजा का विधान, मणिभद्रजी के चमत्कारिक मंत्रों का अनूठा संकलन पुस्तक में है। होम-विधान, आरती एवं भजनों को संकलित किया गया है। संपूर्ण घण्टाकर्ण मंत्रकल्प संपूर्ण रूप से प्रथम बार प्रकाशित किया है। एक पठनीय एवं हर घर में आवश्यक रूप से संग्रहणीय कृति है।

पुस्तक	:	**मणिभद्र साधना**
लेखक	:	**आचार्य अशोक सहजानंद**
प्रकाशक	:	**मेघ प्रकाशन**
		239, गली कुंजम, दरीबाकलां
		चांदनी चौक, दिल्ली-110006
मूल्य	:	**रु. 200/- (डाक खर्च रु. 25)**

पक्षी-वास

वरुण कुमार सिंह

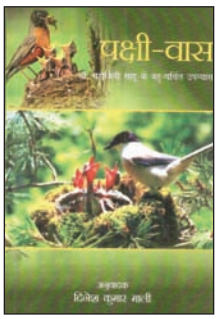

सरोजिनी साहू न केवल उड़ीसा वरन भारत एवं दुनिया में भी साहित्य के क्षेत्र में जाना-माना नाम है। सरोजिनी साहू द्वारा लिखे गए उपन्यास एवं कहानियां ज्यादातर ओड़िया भाषा में लिखी गई है जो कि नारीवाद संवेदनाओं पर आधारित है। इन उपन्यासों और कहानियों का हिंदी भाषा में अनुवाद करके दिनेश कुमार मालीजी ने बहुत सराहनीय काम किया है जो कि हिन्दी जगत के लिए गौरव की बात है। इस उपन्यास के अनुवादक दिनेश कुमार माली जो राजस्थान के मूल निवासी है इसके लिए राजस्थान के मुख्यमंत्री श्री अशोक गहलोत का प्रशंसनीय संदेश भी है जो हम साहित्यकारों के लिए काफी गौरवशाली बात है।

यह उपन्यास मूलत: भारत के उत्तर पूर्व इलाके में फैले नक्सलवाद और निम्नजाति जो कि चमार का काम करती है और सतनामी के नाम से भी जानी जाती है उसकी भावनाओं का सजीव चित्रण किया है। इस उपन्यास को पढ़ने से हमारे जैसे उत्तर भारतीय लोगों के रोंगटे खड़े कर देने वाली सच्चाई का पता चलता है कि पूर्व इलाके में लोग अभी भी कितने पिछड़े हुए हैं और किस तरह चमार जाति के लोग मरे हुए जानवरों के मांस और हड्डी से अपनी रोटी कमाने को मजबूर है।

उपन्यास में लेखिका द्वारा निम्न जाति के लोगों के अपने बच्चों को लेकर बड़े-बड़े सपने देखने का भी अच्छा चित्रण है। किस तरह वे लोग अपने बच्चों को डॉक्टर, वकील और कलेक्टर आदि के नामों से बुलाते हैं और तरह-तरह के रंगीन सपने बुनते हैं।

यह उपन्यास जाति-प्रथा के पीछे छिपी मानवीय संवेदनाओं और चीत्कारों का बहुत ही मार्मिक चित्रण है और हमारे समाज में फैली झूठी परम्पराओं और ढकोसलों के बारे में किसी भी इंसान को गहराई से सोचने के लिए मजबूर कर देगा।

दिनेश कुमार माली द्वारा नक्सलवाद पर आधारित उपन्यास 'पक्षीवास' का हिंदी में सफल अनुवाद अत्यंत सराहनीय काम है। इस उपन्यास के हिंदी संस्करण द्वारा अन्य प्रांतों में रहने वाले लोग भी पूर्व इलाके की भौतिक, प्राकृतिक और आर्थिक परिस्थितियों से भली-भांति परिचित हो सकते हैं। इस तरह के राष्ट्रभाषा में अनुवाद पूरे भारत को एक सूत्र में पिरोने का काम बखूबी करते हैं। यह उपन्यास हमारे समाज के लिए एक खिड़की का काम करता है जिस पर बुद्धिजीवियों और साहित्यकारों द्वारा विचार किया जाना और उसमें सुधार लाया जाना अनिवार्य जिम्मेदारी बन जाती है।

पुस्तक	:	**पक्षीवास**
लेखक	:	**सरोजिनी साहू**
अनुवादक	:	**दिनेश कुमार माली**
प्रकाशक	:	**यश पब्लिकेशन्स, दिल्ली**
मूल्य	:	**रु. 195/-**

ऊब का गुणगान

अनुराग वत्स

जितना जीवन हमें उबाता है, उतना ही उससे पलायन भी। दरअसल जीवन उतना सरल नहीं है, जितने का आग्रह लिए हम अपने मन में चलते हैं। यही वजह है कि हम जटिल विचारों या बोझिल जीवन स्थितियों से ऊबते या घबराते हैं। हमारी हरचंद कोशिश किसी हल्केपन में सरक जाने की होती है। हम इस मुगालते में रहते हैं कि हल्केपन से हमें राहत मिलेगी। पर यह हल्कापन भी अपने आप में कम उबाऊ नहीं होता। हल्केपन की ऐसी शरण गति हमें उस जैविक अनुभव से ही काट देती है, जिससे हमें अपने होने की पहचान और परख होती है। ऊब के इस दो छोर पर हम ताउम्र आवाजाही करते हैं और जहां भी सुकून महसूस करते हैं, उस स्थिति या व्यक्ति विशेष का गुण-गान करते हैं। दरअसल हमें ऊब के गुण गाना चाहिए जिससे जीवन में हमें हर स्थिति में कुछ न कुछ अच्छा महसूस करने का मौका मिलता है। यह ऊब न होती तो जीवन में कितना एकजैसापन और नीरसता होती, इसकी सिर्फ कल्पना ही की जा सकती है।

सकारात्मक सोच के दस सूत्र

जनार्दन शर्मा

कहते हैं, जीवन में सकारात्मक सोच के साथ पहल करने का तात्पर्य है कि आपने भौतिक सुख-सुविधा के बदले उत्साह एवं शरीर श्रम की क्षमता अर्जित कर ली है- यही सफलता की पहली शर्त है।

महान विद्वान रोबर्ट किपलिंग ने इसे यों शब्दबद्ध किया है- ''यदि आप सपना ले सकते हैं, किन्तु सपनों को अपने पर हावी नहीं होने देते।''

यदि आप अपनी सोच रखते हैं और लक्ष्य सोच तक सीमित नहीं है। यदि आप सफलता व हानि दोनों से मिलते हैं और दोनों छली-पाखंडी तत्वों से समान मानसिकता से व्यवहार करते हैं। यदि आप अनियंत्रित भीड़ से बात करते वक्त स्थिरता रखते हैं, यदि आप सम्राटों से संगत करके भी आमजन से संपर्क रखते हैं तब सारा विश्व और उसमें निहित सभी शांति-संसाधन आपके होंगे और तब ही आप अपने को सही इंसान कह सकेंगे।

यही है वह मानसिकता जब आप जीवन ऐसे जीते हैं कि इसे ईश्वर प्रदत्त सौगात समझकर अपने को कृतज्ञ कहें व इस कृतज्ञता का प्रदर्शन आने वाली चुनौतियों का साहस से सामना करके सिद्ध करें। कहावत भी है कि यदि आप साहसी हैं तो कुदरत की सभी शक्तियां आपसे सहयोग करने को तैयार रहेंगी।

अत: प्रात:काल उठते ही कर्म-पथ पर जाते समय यह दृढ़ निश्चय करके जाइए कि मैं आज अपने दिन की नये व बेहतर तरीके से शुरुआत करता हूं और संकल्प करें कि-

- मैं आज अधिक से अधिक प्रसन्नचित्त रहूंगा।
- मैं आज लोगों से अधिक मित्रतापूर्ण और मधुर व्यवहार करूंगा।
- मैं आज दूसरों के कार्यों, दोषों, गलतियों, असफलताओं की अपेक्षाकृत कम निन्दा व अधिक सहिष्णुता के साथ उनके बारे में सकारात्मक व रचनात्मक रवैया अपनाऊंगा।
- मैं आज अपने कार्य व व्यवहार से ऐसा आभार दूंगा कि किसी कार्य में सफलता निश्चित है। मैं सफलता के लिए बना हूं। मैं सफलता का पर्याय व्यक्तित्व हूं।
- मैं आज अपने विचारों में निराशा या नकारात्मक सोच का स्थान नहीं दूंगा।
- मैं आज दिन में कम से कम तीन बार खुले दिल से से हंसने का अभ्यास करूंगा।
- मैं किसी भी विपरीत स्थिति में पूर्ण शांत एवं बुद्धि-चातुर्य से व्यवहार करूंगा।
- मैं उन नैराश्यपूर्ण एवं नकारात्मक बातों के प्रति उपेक्षा व आंख मूंद लूंगा जिनको मैं बदल नहीं सकता।
- मैं दूसरों के प्रति नम्रता व सद्भावना का व्यवहार करूंगा।
- मैं मानवता एवं दिव्य शक्ति में विश्वास करूंगा।

–सत्य सदन, पुष्कर, अजमेर (राजस्थान)

सहिष्णुता

साध्वीप्रमुखा कनकप्रभा

जीवन-निर्माण के घटक तत्वों में एक बुनियादी घटक है- सहिष्णुता। अच्छा जीवन जीने के लिए सहना जरूरी है। जो सहता है, वह रहता है। जिसमें सहन करने की क्षमता नहीं होती, उसके अस्तित्व को ही खतरा हो जाता है। सहन करना लघुता का नहीं, महत्ता का प्रतीक है। 'क्षमा बड़न को होत है'–यह कथन निराधार नहीं है। संसार में जितने भी महापुरुष हुए है, उन्होंने बहुत सहन किया है। महावीर, बुद्ध, ईसा, सुकरात, भिक्षु, गांधी, तुलसी आदि महापुरुषों का जीवन सहिष्णुता की जीवंत प्रेरणा है।

सहिष्णुता के दो रूप हैं–शारीरिक और मानसिक। सामान्यत: शारीरिक कष्ट सहन हो जाते हैं, पर मानसिक कष्ट को सहना कठिन होता है। कभी-कभी शारीरिक कष्ट भी असह्य बन जाते हैं। किंतु यह स्थिति तब आती है, जब शारीरिक कष्टों के साथ मन का योग होता है। शरीर से मन को हटा लिया जाए तो कष्टानुभूति में बहुत अंतर आ जाता है।

आचार्य श्री महाप्रज्ञजी ने सफलता के कतिपय सूत्रों की चर्चा करते हुए एक सूत्र दिया–सहन करो, सफल बनो। जीने के लिए अथवा सफल जीवन जीने के लिए सहिष्णुता के अतिरिक्त कोई दूसरा रास्ता ही नहीं है। परिवार, समाज और राष्ट्र के विकास का माइलस्टोन है सहिष्णुता। विकास शिखर पर आरोहण करने के लिए सहिष्णुता के सोपान का सहारा लेना ही होगा।

असहिष्णुता वर्तमान युग की ज्वलंत समस्या है। इससे निजात पाने के लिए सहिष्णुता की अनुप्रेक्षा की जाए, नियमित रूप से की जाए तो जीवन को नयी दिशा मिल सकती है। सहिष्णुता का विकास सबके लिए आवश्यक है। विद्यार्थियों के लिए सहिष्णुता वह चाबी है जो जीवन के अमूल्य खजाने का ताला खोल सकती है।

अहिंसा के मायने

के. आर. शर्मा

महात्मा गांधी कहते हैं कि मेरी अहिंसा इस बात की इजाजत नहीं देती कि खतरा सामने देखकर अपने प्रियजनों को असुरक्षित छोड़कर खुद भाग जाओ। हिंसा और कायरतापूर्ण पलायन में से मैं हिंसा को तरजीह दूंगा। अहिंसा कायरता की आड़ नहीं है, बल्कि यह वीर का सर्वोच्च गुण है। अहिंसा के व्यवहार के लिए तलवारबाजी से ज्यादा वीरता की जरूरत है। कायरता और अहिंसा का कोई मेल नहीं है। तलवारबाजी को छोड़कर अहिंसा को अपनाना संभव है और आसान भी है। अहिंसा की पूर्व शर्त यह है कि अहिंसक व्यक्ति में वार करने की क्षमता हो। अहिंसा मनुष्य की प्रतिशोध लेने की भावना का सचेतन और जाना-बूझा संयमन है।

अहिंसा के मार्ग का पहला कदम यह है कि हम अपने दैनिक जीवन में परस्पर सच्चाई, विनम्रता, सहिष्णुता और प्रेममय दयालुता का व्यवहार करें। एक कहावत है कि ईमानदारी सबसे अच्छी नीति है। नीतियां तो बदल सकती हैं, मगर अहिंसा का पंथ अपरिवर्तनीय है। अहिंसा का अनुगमन उस समय करना आवश्यक है, जब हमारे सामने चारों ओर हिंसा का नंगा नाच हो रहा हो। अहिंसक व्यक्ति के साथ अहिंसा का व्यवहार करना कोई बड़ी बात नहीं है। यह कहना कठिन है कि इस व्यवहार को अहिंसा कहा भी जा सकता है या नहीं। लेकिन अहिंसा जब हिंसा के मुकाबले खड़ी होती है, तब दोनों का फर्क पता चलता है। ऐसा करना तब तक संभव नहीं है, जब तक कि हम सचेत, सतर्क और प्रयासरत न रहें।

अध्यक्षीय

मनीष जैन

पुरुषार्थ की ज्योति जलाएं

इस भूमण्डलीकरण, आर्थिक आजादी और आक्रामकता के दौर में एक ऐसी मानवीय संरचना की आवश्यकता है जहां इंसान और उसकी इंसानियता दोनों बरकरार रहे। इसके लिये मनुष्य को भाग्य के भरोसे न रहकर पुरुषार्थ करते रहना चाहिए। पुरुषार्थ कभी व्यर्थ नहीं जाता बल्कि सफलता का सूत्रधार है पुरुषार्थ।

इंसान का अपना प्रिय जीवन-संगीत टूट रहा है। वह अपने से, अपने लोगों से और प्रकृति से अलग हो रहा है। उसका निजी एकांत खो रहा है और रात का खामोश अंधेरा भी। इलियट के शब्दों में, ''कहां है वह जीवन जिसे हमने जीने में ही खो दिया।'' फिर भी हमें उस जीवन को पाना है जहां इंसान आज भी अपनी पूरी ताकत, अभेद्य जिजीविषा और अथाह गरिमा और सतत पुरुषार्थ के साथ जिंदा है। इसी जिजीविषा एवं पुरुषार्थ के बल पर वह चांद और मंगल ग्रह की यात्राएं करता रहा है। उसने महाद्वीपों के बीच की दूरी को खत्म किया है। वह अपनी कामयाबियों का जश्न मना रहा है फिर भी कहीं न कहीं इंसान के पुरुषार्थ की दिशा दिग्भ्रमित रही है कि मनुष्य के सामने हर समय अस्तित्व का संघर्ष कायम है। हालांकि इस संघर्ष से उसको नयी ताकत, नया विश्वास और नयी ऊर्जा मिलती है और इसी से संभवत: वह स्वार्थी बना तो परोपकारी भी बना। वह क्रूर बना तो दयालु भी बना, वह लोभी व लालची बना तो उदार व अपरिग्रह भी बना। वह हत्यारा और हिंसक हुआ तो रक्षक और जीवनदाता भी बना। आज उसकी चतुराई, उसकी बुद्धिमता, उसके श्रम और मनोबल पर चकित हो जाना पड़ता है। इस सबके बावजूद जरूरत है कि इंसान का पुरुषार्थ उन दिशाओं में अग्रसर हो जहां से उत्पन्न सद्गुणों से इंसान का मानवीय चेहरा दमकने लगे। इंसान के सम्मुख खड़ी अशिक्षा, कुपोषण और अन्य जीने की सुविधाओं के अभाव की विभीषिका समाप्त हो। वह जीवन के उच्चतर मूल्यों की ओर अग्रसर हो। सत्य, अहिंसा, सादगी, सच्चाई और मनुष्यता के गुणों के बारे में उसकी आस्था कायम रहे।

जीवन में मनुष्य को अपना प्रयास नहीं छोड़ना चाहिए। किसी काम में सफलता मिलेगी या नहीं, कहा नहीं जा सकता। भविष्य में क्या होने वाला है, सब अनिश्चित है। यदि कुछ निश्चित है तो वह है व्यक्ति का अपना पुरुषार्थ। सफलता मिलेगी या नहीं इसकी चिंता छोड़कर केवल अपना काम करता चले। सफलता मिल गई तो वाह-वाह और यदि नहीं भी मिली तो भी मन को इतना संतोष तो रहेगा कि जितना मुझे करना था वह मैंने किया। यह संतोष भी एक प्रकार की सफलता ही है।

यह आवश्यक नहीं है कि सफलता प्रथम प्रयास में ही मिल जाए। जो आज शिखर पर पहुंचे हुए हैं वे भी कई बार गिरे हैं, ठोकर खाई है। उस शिशु को देखिए जो अभी चलना सीख रहा है। चलने के प्रयास में वह बार-बार गिरता है किंतु उसका साहस कम नहीं होता। गिरने के बावजूद भी प्रसन्नता और उमंग उसके चेहरे की शोभा को बढ़ाती ही है। जरा विचार करें उस नन्हें से बीज के बारे में जो अपने अंदर विशाल वृक्ष उत्पन्न करने की क्षमता समेटे हुए है। आज जो विशाल वृक्ष दूर-दूर तक अपनी शाखाएं फैलाएं खड़ा है, जरा सोचो कितने संघर्षों, झंझावतों को सहन करने के बाद इस स्थिति में पहुंचा है। सर्वस्व समर्पण और अपार प्रसव पीड़ा सहन करने के बाद ही कोई नारी मातृत्व का गौरव प्राप्त करती है।

यदि लक्ष्य स्पष्ट हो, उसको पाने की तीव्र उत्कष्ठा एवं अदम्य उत्साह हो तो अकेला व्यक्ति भी बहुत कुछ कर सकता है। विश्वकवि रविंद्रनाथ टैगोर का यह कथन कितना सटीक है कि अस्त होने के पूर्व सूर्य ने पूछा कि मेरे अस्त हो जाने के बाद दुनिया को प्रकाशित करने का काम कौन करेगा। तब एक छोटा-सा दीपक सामने आया और कहा प्रभु! जितना मुझसे हो सकेगा उतना प्रकाश करने का काम मैं करूंगा। हम देखते हैं कि आखिरी बूंद तक दीपक अपना प्रकाश फैलाता रहता है। जितना हम कर सकते हैं उतना करते चले। आगे का मार्ग प्रशस्त होता चला जाएगा। किसी ने कितना सुंदर कहा है-जितना तुम कर सकते हो उतना करो, फिर जो तुम नहीं कर सको, उसे परमात्मा करेगा।

जो व्यक्ति आपत्ति-विपत्ति से घबराता नहीं, प्रतिकूलता के सामने झुकता नहीं और दु:ख को भी प्रगति की सीढ़ी बना लेता है, उसकी सफलता निश्चित है। ऐसे धीर पुरुष के साहस को देखकर असफलता घुटने टेक देती है। इसीलिए तो इतरा पुत्र महीदास एतरेय ने कहा है-''चरैवेति चरैवेति'' अर्थात् चलते रहो, चलते रहो, निरंतर श्रमशील रहो। किसी महापुरुष ने कितना सुंदर कहा है-अंधकार की निंदा करने की अपेक्षा एक छोटी-सी मोमबत्ती, एक छोटा-सा दिया जलाना कहीं ज्यादा अच्छा होता है।

किसी भी दशा में निरंतर प्रयास करने के बाद भी यदि वांछित सफलता न मिले तो हताश, उदास एवं निराश नहीं होना है। इस जगत में सदैव मनचाही सफलता किसी को भी नहीं मिली है और न ही कभी मिल सकती है। लेकिन यह भी सत्य है कि किसी का पुरुषार्थ कभी निष्फल नहीं गया है। ■

INDIAN CHARITY & WELFARE EXCHANGE

The mission of ICWE is to achieve Global Excellence in philanthropic services and to dedicate ourselves for worldwide Donor-Beneficiary Exchange, keeping in the view the needs and interests of the society.

ICWE is committed to:-

- The society by making a sustainable difference in the life of the less privileged children, women, aged, disabled people and of those who are living in poverty & injustice.
- Works as an Exchange between donor and beneficiary to facilitate their objectives and to support them in identifying the potential donor or beneficiary and the opportunities that each side offers to the other side.
- Provide philanthropic advisory services to donors and NGOs to help them in their aims & objectives and to perform their work properly so that they can achieve their ultimate goal of serving the underprivileged sections of the society.
- Maintain a worldwide accessible data bank of NGOs. Donors and Beneficiaries to make this field more collaborative.

Advisory Services

ICWE with its highly qualified and focused team of Professionals provides specialized and valuable advisory services to NGOs, Trusts, Corporate and other philanthropic organizations on the following areas :

- Legal
- Financial
- Management
- Project
- Fund Raising
- Event Management

ICWE Care for All

ICWE is committed to serving various social causes. It launches various programs for the underprivileged sections of the society. Its key areas are:

- Children
- Women
- Aged People
- Disabled
- Education
- HIV

Register with us

Donor: ICWE provides a global platform to Donors to identify a cause that is appropriate for their support.

Beneficiary : ICWE provides financial assistance to Individual and Institutional beneficiaries. It also provides a platform for them to search and approach potential donor for their cause.

Please register on our website and explore the world of philanthropy.

Contact Us

Indian Charity & Welfare Exchange

A56/A First Floor, Lajpat Nagar II,
New Delhi - 110024 [India]

Phone : +91-11-41720778
Fax : +91-11-29847741
www.indiancharityexchange.com
info@indiancharityexchange.com

Delhi Postal Regd No. DL(E)-20/5333/2010-2012
Date of Posting: 5 - 6 Every month

RNI No. DELBIL/2010/32807
July 2011

mÙke vkj vkd"kd
Nikb d fy, lid dj

uxhu idk'ku

NAGEEN PRAKASHAN PVT. LTD.
Educational Publisher, Printer and Distributor
310, Western Kutchery Road, Meerut-250 001, U.P. (INDIA)
Ph: (0121) 2660099, 2663154, 2643154, 2623998 Fax: 2643153
E-mail: nageenprakashan@yahoo.com Website: www.nootanindia.com

If undelivered please return to:
Editor, Samradha Sukhi Pariwar, E-253, Saraswati Kunj Appartment, 25 I. P. Extension, Patparganj, Delhi-110092